इग्नू
जन-जन का
विश्वविद्यालय

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ

BANC-134
पुरातात्विक मानवविज्ञान के मूल तत्व

खंड

2

काल–निर्धारण पद्धतियाँ और अतीत की रचना

इकाई 5
काल–निर्धारण की पद्धितियाँ 73

इकाई 6
जलवायु पुनर्निर्माण की पद्धतियाँ 89

इकाई 7
नूतन जीव महाकल्प चतुर्थ महाकल्प के विशेष संदर्भ में 105

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 5 कालनिर्धारण की पद्धतियाँ*

इकाई की रूपरेखा

5.0 परिचय

5.1 सापेक्ष कालनिर्धारण पद्धतियाँ

5.1.1 स्तर विज्ञान

5.1.2 फ्लोरीन कालनिर्धारण

5.2 निरपेक्ष कालनिर्धारण पद्धतियाँ

5.2.1 अविकिरणमापिक काल निर्धारण पद्धति

5.2.1.1 वृक्ष कालानुक्रमिकी

5.2.2 विकिरणमापिक काल निर्धारण पद्धति

5.2.2.1 रेडियोधर्मी कार्बन पद्धति

5.2.2.2 पोटैशियम/आर्गन कालनिर्धारण पद्धति

5.2.3 अमीनो अम्ल पुनः प्रतिरूपण

5.2.4 पुराचुंबकीय कालनिर्धारण

5.2.5 तापसंदीप्ति कालनिर्धारण

5.3 सारांश

5.4 संदर्भ

5.5 आपकी प्रगति की जांच के लिए उत्तर

अधिगम के उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप सक्षम होंगे :–

- पुरातात्विक अध्ययन में विभिन्न कालनिर्धारण पद्धतियाँ किस प्रकार सहायता करती है को जानने में ;
- ये समझने में कि ये पद्धतियाँ घटनाओं के कालक्रम को समझ में कैसे सहायता प्रदान करती हैं, और
- मानव आकारिकी और सांस्कृतिक उदविकास के बारे जानने में।

5.0 परिचय

पुरानृविज्ञान या पुरातात्विक मानवविज्ञान के अध्ययन का तब तक कोई अर्थ नहीं है जब तक कि घटनाओं का कालानुक्रमिक अनुक्रम प्रभावी ढ़ग से पुनर्निर्मित नहीं

*योगदानकर्ता : प्रो. राजन गौर, मानवविज्ञान विभाग, पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़.

किया जाता है। जब भी कोई नया जीवाश्म या एक नया पुरातात्विक शिल्प–तथ्य खोजा जाता है तो यह पता लगाना बहुत महत्वपूर्ण है कि यह कितना पुराना है। हाल में, पुरामानवविज्ञान या पुरातत्व में, वैज्ञानिक रूचि जीवाश्म या शिल्प तथ्य में इतनी ज्यादा नहीं होती है, केवल उस जानकारी में होती है जो उन प्रश्नों के बारे में वैज्ञानिक पूछ सकते हैं। एक मुख्य सवाल एक पुरातत्वविद निश्चित रूप से पूछेगा कि ''शिल्प–तथ्य और स्थल कितने पुरातन हैं''? वास्तव में, कालक्रम के रूपरेखा के बिना, जीवाश्म या पुरातात्विक शिल्प–तथ्य वास्तविक वैज्ञानिक महत्व को खो देता है। यह समझना महत्वपूर्ण है कि जीवाश्म या शिल्प–तथ्य मानव आकारिकी या सांस्कृतिक विकास की योजना में कहां उपयुक्त होता है। एक विशेषज्ञ के लिए, चट्टानों की अवस्था का पता लगाना पृथ्वी के इतिहास के पुनर्निर्माण के लिए महत्वपूर्ण हैं। जीवाश्म, शिल्पकृतियाँ या चट्टानों की अवस्था का पता लगाने के लिए वैज्ञानिक कई कालनिर्धारण पद्धतियों पर निर्भर करते हैं। इन पद्धतियों को दो व्यापक श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है। (क) सापेक्ष कालनिर्धारण पद्धतियाँ (ख) निरपेक्ष कालनिर्धारण पद्धतियाँ।

अपनी प्रगति जांचे

1. दो प्रकार के कालनिर्धारण पद्धतियाँ क्या हैं?

....

....

....

....

5.1 सापेक्ष कालनिर्धारण पद्धतियाँ

सापेक्ष कालनिर्धारण अतीत की घटनाओं या वस्तुओं के निरपेक्ष अवस्था को जाने बिना सापेक्ष अनुक्रम को निर्धारित करने की एक तकनीक है। यह एक नमूना या रचना की स्तरिक या पुरातत्विय अवस्था है (ओकले, 1964)। जीवाश्मों या शिल्पकृतियों के एक संग्रह में, इन पद्धतियों का उपयोग उनके निरपेक्ष रूप से वास्तविक अवस्था जाने बिना साक्षेप अवस्था पता लगाने के लिए किया जा सकता है। इन पद्धतियों का उपयोग करके एक जीवाश्मविज्ञानी यह पता लगाने में सक्षम हो सकता है कि संग्रह में कौनसा जीवाश्म दूसरे से पुराना है, यह जाने बिना कि उनकी वास्तविक अवस्था वर्षों के अनुसार क्या है। दूसरे शब्दों में, सापेक्ष कालनिर्धारण एक जीवाश्म, शिल्प–तथ्य या एक स्थल को पुराने या तरुण या दूसरों के समान अवस्था के रूप में अवस्था निर्धारित करता है, लेकिन निश्चित तिथियाँ (वर्षों में) उपलब्ध नहीं करता हैं। दूसरे अर्थ में, बीसवीं शताब्दी के विकिरणमापिक कालनिर्धारण पद्धतियों की खोज से पहले, पुरातत्वविदों, जीवाश्मविज्ञानी और भू–गर्भशास्त्रीयों को मुख्य रूप से सापेक्ष कालनिर्धारण पद्धतियों पर भरोसा करना पड़ा। इसके फलस्वरूप दुनिया के विभिन्न हिस्सों से जीवाश्मों की कालानुक्रमिक रूप से तुलना करना मुश्किल था। हालांकि सापेक्ष कालनिर्धारण तकनीक केवल घटनाओं के घटने के क्रमिक क्रम के बारे जानकारी प्रदान कर सकती है, न कि घटनाओं के घटने के वास्तविक समय के बारे में। यह अभी भी उन सामग्रियों के लिए उपयोगी बनी हुई है जिनमें निरपेक्ष कालनिर्धारण के लिए गुणों की कमी है। अब भी ये समान भूगर्भीय इतिहास वाले या आस–पास के स्थलों से जीवाश्मिकीय या पुरात्तवीय खोजों को संबंधित करने में उपयोगी हो सकते है। स्तरित शैलविज्ञान और फ्लोरीन कालनिर्धारण सामान्य सापेक्ष कालनिर्धारण पद्धतियों में से हैं।

5.1.1 स्तर विज्ञान

यह सबसे पुराने और सबसे सरल साक्षेप कालनिर्धारण पद्धतियों में से एक है। स्तर विज्ञान भूविज्ञान की एक शाखा है जो स्तरीकृत मिट्टी और चट्टानों से संबंधित है, यानी मिट्टी और चट्टान जो परतों के रूप में निक्षिप्त होती हैं। स्तर विज्ञान मूल रूप से स्तरीकृत मिट्टी और चट्टानों के अनुक्रम, संरचना और संबंध का अध्ययन है। अगर हम ग्रामीण इलाकों में जाते हैं जहाँ कुछ पहाड़ियों हैं, तो हम चट्टानों की विभिन्न परतें देख सकते हैं जो क्षैतिज या झुकी हो सकती हैं। रंग, रासायनिक संरचना या बनावट में अन्तर के कारण प्रत्येक परत को अन्य परत से विभेदित किया जा सकता है। प्रत्येक परत एक समय अवधि को दर्शाती है जब तलछट के निक्षेपण की प्रक्रिया एक तरह से निरंतर जारी रही हो। अगली परत निक्षेपण की प्रक्रिया में बदलाव को दर्शाती है। स्तर विज्ञान के दो मौलिक सिद्धांत हैं :

एकरूपतावाद और अध्यारोपण : एकरूपतावाद भूर्गभ विज्ञान का एक मौलिक एकीकरण सिद्धांत है जिसकी कल्पना मूल रूप से 1785 में ब्रिटिश भूवैज्ञानिक जेम्स हटन ने की थी और बाद में 1830 में सर चार्ल्स लाइल ने अपने ''भूगोल के सिद्धांतों'' में इसे विकसित किया और व्याख्या की। इस सिद्धांत के अनुसार भूगर्भीय प्रक्रियाएं जो अब पृथ्वी की भूमि–परत के बदलाव के लिए काम कर रही हैं, उसी तरह और अनिवार्य रूप से उसी तीव्रता से साथ भूगर्भीय समय के दौरान भी इसने काम किया है, अतीत की इन भूगर्भीक घटनाओं को वर्तमान प्रत्यक्ष परिघटना और शक्तियों द्वारा समझाया जा सकता है। संक्षेप में अभिव्यक्ति, ''वर्तमान अतीत की चाभी है,'' जो एकरूपतावाद को स्पष्ट करता है।

अध्यारोपण स्तर विज्ञान के सिद्धांतों में से एक है, जिसको आमतौर पर सापेक्ष कालनिर्धारण में उपयोग किया जाता है। इस सिद्धांत को पहली बार 1669 में डेनिश वैज्ञानिक निकोलस स्टेनो ने प्रस्तुत किया था, जिन्हें स्तर विज्ञान का जनक भी माना जाता है। इस सिद्धांत के अनुसार अबाधित परतों में सबसे पुरानी परत सब नीचे स्थित है और सबसे नवीनतम परत शीर्ष पर स्थित है। उन्होंने यह भी बताया कि पानी में जमा तलछट की परतें प्रारंभ में क्षैतिज (या लगभग क्षैतिज) परतों के रूप में बने होते हैं। जैसे–जैसे परतें समय के साथ–साथ जमा होती हैं, पुरानी परतें नवीनतम परतों के नीचे दब जाती हैं। चित्र–1 में यह सिद्धांत स्पष्ट रूप से देखा जा सकता हैं। परत–ए जो पहले निक्षिप्त हुई थी, निचले स्तर पर स्थित है और इसलिए ऊपरीशायी परतें बी से एक जो बाद में निक्षिप्त हुई थी, की तुलना में पुरानी है। हालांकि हम नहीं जानते कि प्रत्येक परत कितनी पुरानी हैं, लेकिन परतों ए से एफ के बीच हम बता सकते हैं कि कौन सी एक दूसरे से पुरानी है। इस तरह चट्टान परतों और उनमें अंतर्हित जीवाश्म या शिल्पकृतियों सापेक्ष समय संबंध को समझा जा सकता है। लेकिन इस सिद्धांत को बिना सोचे–समझे लागू नहीं किया जाना चाहिए। यह सिद्धांत वहाँ लागू होता है जहाँ चट्टान परतों के अध्यारोपण का सामान्य क्रम प्राकृतिक या मानव क्रिया द्वारा बाधित नहीं किया गया हो। यह अच्छी तरह से जाना जाता है कि पृथ्वी के भूमि–परत के विकृति की प्राकृतिक प्रक्रिया अध्यारोपण के सामान्य अनुक्रम को, चट्टान परतों को मुडवां और भ्रंशन से बाधित कर सकता है। इसके परिणाम स्वरूप पुरानी चट्टानें नवीनतम चट्टानों के ऊपर स्थित हो सकती हैं। मानव या पशु क्रियाऐं चट्टान परतों के सामान्य क्रम को बाधित कर सकते हैं। शवाधान के लिए खुदाई के माध्यम से, जहाँ अपेक्षाकृत नवीनतम शिल्प–तथ्य अपेक्षाकृत पुराने स्तर पर स्थित हो सकते हैं। चित्र–2 मूल स्तर की गड़बड़ी को दिखाता है। इस प्रकरण

में हड्डी–ए और हड्डी–बी एक ही अवस्था में नहीं भी हो सकते हैं, भले ही वे दोनों एक ही परत में दफन हैं यानि लागू करने से पहले यह सुनिश्चित करना चाहिए कि चट्टान परतों का मूल अनुक्रम बाधित नहीं हुआ है।

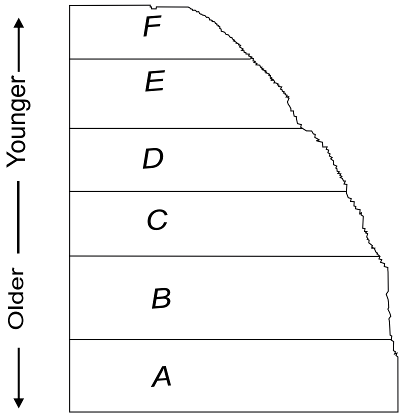

चित्र : 1 चट्टान परतों के अनुक्रम का आरेखण प्रस्तुतिकरण अध्यारोपण दिखा रहा है जहाँ निचली परत ए ऊपरी परत एफ से पुरानी है।

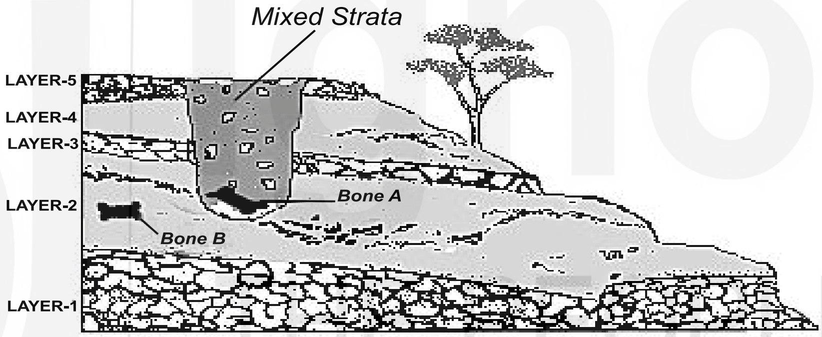

चित्र : 2 चट्टान परत की मूल स्थिति में विघन। हड्डी–ए और हड्डी–बी हालांकि एक ही परत–परत में स्थिति हैं लेकिन परतों के मिश्रण के कारण एक ही अवस्था के नहीं हो सकते हैं। ऐसी परिस्थितियों में स्तर विज्ञान का सिद्धांत लागू होने योग्य नहीं है।

अपनी प्रगति जांचें

2. आप स्तर विज्ञान से क्या समझते हैं?

....

....

....

5.1.2 फ्लोरीन कालनिर्धारण

यह एक सापेक्ष (रासायनिक) कालनिर्धारण पद्धति है जो हड्डियों में फ्लोरीन मात्रा के संचय की तुलना करती है। फ्लोरीन कालनिर्धारण पद्धति शायद एमिली रिविएर और एडाल्फ कर्नोट के सहयोगी प्रयासों के कारण 1890 के दशक में विकसित हुई थी (गुड्स और ओल्सन, 2009)। लेकिन 1940 के दशक तथा 1950 के शुरूआत में इस पद्धति में सुधार किया गया और पुरामानवविज्ञान में कई समस्याओं को हल करने के लिए केनेथ पी. ओकले द्वारा व्यापक रूप से कार्यान्वित किया गया था (गुडम और ओल्सन, 2009)। पानी में घुलनशील फलोराइड दुनिया भर के भूमिगत जल में सूक्ष्ममात्रिक मात्रा में (भाग प्रति दस लाख पाया जाना) पाए जाते हैं। जमीन

में दफन कंकाल तत्व रिसते हुए भूमिगत जल से फ्लोरीन को अवशोषित करते हैं। हड्डियों और दांतों के मामले में, फ्लोराइड आयन हड्डियों और दांतों के मुख्य घटक हाइड्रॉक्सी–एपिटाइट के हाइड्रॉकसिल कैल्शियम, हाइड्रॉक्साइपेटाइट के बने होते है, खनिज मैट्रिक्स में अवरोधित हो जाते हैं। हाइड्रॉक्सिल आयन धीरे–धीरे घुलनशील फ्लोरापेटाइट से विस्थापित होते हैं। ये आयन फ्लोरापेटाइट बनाते हैं जो काफी कम घुलनशील और अधिक स्थिर होते हैं। एक बार जब वे हड्डी में प्रवेश कर लेते हैं तो तब तक निर्मुक्त नहीं होते हैं जब तक पूरी हड्डी घुल न जाए। यह प्रक्रिया निरंतर जारी रहती है और समय के साथ हड्डी और दाँत में फ्लोरीन की मात्रा बढ़ जाती है। जितनी पुरानी हड्डी, उतनी ज्यादा फ्लोरीन की मात्रा संचय होती है।

$$Ca_5 (Po_4)_3 OH + \text{Fluorine ion} \longrightarrow Ca_5 (PO_4)_3 F$$

कोई भी यह तर्क दे सकता है कि चूंकि हड्डीयों में फ्लोरीन मात्रा समय के साथ बढ़ती है तो इसी पद्धति का उपयोग निरपेक्ष कालनिर्धाण के लिए क्यों नहीं किया जा सकता है। यह केवल इस कारण है कि भूमिगत जल की फ्लोरीन सघनता हर जगह भिन्न होती है। एक फ्लोरीन समृद्ध क्षेत्र में नयी हड्डियों की तुलना में अधिक फ्लोरीन जमा कर सकती है, जहाँ भूजल फ्लोरीन सांद्रता तुलनात्मक रूप से बहुत कम है। इसलिए वर्षों के संदर्भ में हड्डीयों का तिथिकरण संभव नहीं है।

हालांकि यह पद्धति किसी विशेष स्थल पर मौजूद विभिन्न कालों की जीवाश्म हड्डीयों के अंतर करने का उपयोगी माध्यम है। यदि एक इलाके में अलग–अलग कालों की हड्डियों को अलग करने में किसी को दिलचस्पी है तो फ्लोरीन मात्रा का आकलन सहायक है क्योंकि एक स्थल पर हड्डीयों के एक दूसरे के सापेक्ष कालों संग्रह को उनके फ्लोरीन मात्रा के आधार पर नए संग्रह से अलग किया जा सकता है। एक स्थान पर लंबे समय से दफन हड्डीयों में व्यापक रूप से तुलनीय फ्लोरीन मात्रा होगी। इसके अलावा, नयी या पुरानी हड्डीयों के संग्रह के सम्मिश्रण को अनियमित रूप से ज्यादा पुरानी हड्डीयों या कम नयी हड्डीयों फ्लोरीन मात्रा के द्वारा बता सकते हैं।

फ्लोरीन कालनिर्धारण 'पिलडाउन मैन' अफवाह को प्रकाश में लाने करने में बहुत सफल रही है जो पुरामानवविज्ञान में सबसे बड़ी अफवाहों में से एक है। पिलडाउन खोपड़ी और जबड़े की हड्डी पर फ्लोरीन परीक्षण किया गया था (ओकले, 1950)। खोपड़ी और जबड़े की हड्डी में फ्लोरीन का स्तर उसी क्षेत्र से एकत्र अन्य हड्डीयों के नमूने की तुलना में काफी कम था। बाद में वीनर और अन्य (1953) ने साबित कर दिया ये हड्डियाँ आधुनिक मानव मस्तिष्क कोश और एक ओंरगुटान के जबड़े की हड्डियां हैं जो रसायन में सने हुए थे।

5.2 निरपेक्ष कालनिर्धारण पद्धतियाँ

निरपेक्ष कालनिर्धारण पद्धतियाँ एक जीवाश्म, शिल्प–तथ्य या चट्टान की सटीक आयु उपलब्ध कराती है। सापेक्ष कालनिर्धारण पद्धतियों की तुलना में ये स्पष्ट रूप से अधिक उपयोगी पद्धतियाँ है। सापेक्ष कालनिर्धारण पद्धतियों के विपरीत जो केवल घटनाओं का क्रम उपलब्ध कराते हैं, निरपेक्ष कालनिर्धारण पद्धतियाँ तिथि पत्र प्रणाली के संदर्भ में एक संख्यात्मक आयु उपलब्ध कराती है। पद्धतियों की एक विविधता है जो जीवाश्म या शिल्प–तथ्यों के लिए वास्तविक तिथी उपलब्ध कराती है। अधिकाशं वास्तव में सतह की तिथि निर्दिष्ट करते है जिसमें हड्डियॉ या संबंधित सामग्री मौजूद है, और न कि खुद जीवाश्म की। निरपेक्ष कालनिर्धारण पद्धतियाँ अक्सर जीवाश्मों या शिल्प–तथ्यों या चट्टानों की सामग्रियों के भौतिक या रासायनिक गुणों पर आधारित होती हैं। ये

विकिरणमापिक (रेडियोमैट्रिक) या अविकिरणमापिक हो सकते हैं। विकिरणमापिक कालनिर्धारण (रेडियोधर्मी) समस्थानिक के क्षय पर आधारित है, जो कि विदित और स्थिर क्षय दर से रेडियो सक्रियताजन्य समस्थानिक में क्षय से हो जाते हैं। विकिरणमापिक कालनिर्धारण पद्धतियों के उदाहरण रेडियोकार्बन कालनिर्धारण, पोटैशियम/आर्गन कालनिर्धारण, विखण्डन–पथ कालनिर्धारण इत्यादि है; जबकि अविकिरणमापिक पद्धतियाँ सामग्री के कुछ रासायनिक या भौतिक गुणों पर आधारित होती हैं। वृक्ष कालानुक्रामिक सामान्य अविकिरणमापिक कालनिर्धारण पद्धतियों में से एक है।

अपनी प्रगति जांचे

3. निरपेक्ष कालनिर्धारण पद्धतियाँ क्या उपलब्ध कराती हैं?

....

....

....

....

5.2.1 अविकिरणमापिक कालनिर्धारण पद्धति

नीचे अविकिरणमापिक कालनिर्धारण पद्धति का वर्णन दिया गया है जो हमें जीवों की पुरातात्विक आयु की पहचान करने में मदद करता है।

5.2.1.1 वृक्षकालानुक्रामिकी

वृक्षकालानुक्रमिकी तिथि–निर्धारण की एक वैज्ञानिक पद्धति है जो वृक्ष–वलय की विभिन्नता के विश्लेषण पर आधारित है। इसे वृक्ष–वलय तिथि–निर्धारण के रूप में भी जाना जाता है। यह पद्धति 1929 में एरिजोना विश्वविद्यालय के एक खगोलविद ए.ई. डगलस द्वारा तैयार की गई थी, उनका उद्देश्य इसको जलवायु परिवर्तनों के अध्ययन के लिए उपयोग करना था। लेकिन पुरातत्व में इसका उपयोग तुरंत प्रत्यक्ष हो गया। सामान्य तौर पर एक पेड़ मौजूदा लकड़ी और छाल के बीच हर साल एक नये वलय को जोड़ता है। शीतोष्ण और उपध्रुवीय जलवायु में, वर्धन ऋतु की शुरूआत में जोड़े गए कोशिकाएं आमतौर पर बड़ी और पतली–दीवार वाली होती हैं और वर्धन ऋतु की समाप्ति करीब आते ही ये छोटी और मोटी–दीवार वाली बन जाती है। जब एक पेड़ के तनो के अनुप्रस्थ काट का निरीक्षण किया जाता है, एक परिसीमा रेखा प्रायः छोटी कोशिकाएं वाली बाद के वर्ष की वर्धन ऋतु के वसंत दारू के बीच दिखाई देती है। (चित्र–3)। वलय की संख्या को गिन कर पेड़ की आयु का अनुमान लगाया जा सकता है जब उसे काटा गया था। वार्षिक वृद्धि चक्रिकाएँ समान चौड़ाई की नहीं होती है। अनुकूल जलवायु के वर्षों के दौरान (नम वर्षों) वलय चौड़ा होता है; प्रतिकूल जलवायु वर्षों के दौरान (सूखे के दौरान) वे संकीर्ण होता हैं, क्योंकि वृद्धि कम हो जाती है। यह नम और शुष्क मौसमों की प्रतिनिधित्व वाले मोटी और पतली चक्र वलय के नमूने को विकास का कारण बनता है, जो कि एक अवधि के लिए अनूठा है और जिसे भविष्य में दोहराए जाने की संभावना नहीं है। यह विविधता और मौसमी वर्षा के तरीके की अनोखी प्रकृति पेड़ के वलय की मोटाई विविधता के नमूने मे चित्रित होती है और वृक्ष कालक्रमिकी को संभव बनाती है। तल छलय शोतोष्ण क्षेत्रों में अधिक दृष्टिगोचर हैं, जहाँ मौसम अधिक स्पस्ट रूप से भिन्न होते हैं। यह पद्धति उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में जहाँ वर्षा में कम मौसमी भिन्नता होती है, लागू नहीं हो सकती है।

चित्र :3 पेड के तने का अनुप्रस्थ काट स्पष्ट रूप से वार्षिक चक्रिकाएँ दिखाते हैं।
स्रोत https://www.tree.arizona.edu/introdendro/

एक ही क्षेत्र के पेड़ एक निश्चित अवधि के लिए समान स्वरूप की वलय चौड़ाईयाँ विकसित करने के लिए प्रवृत होगें। एक जैसे भौगोलिक क्षेत्र और समान जलवायु स्थितियों में बढ़ते हुए पेड़ों के इन स्वरूपों की तुलना की जा सकती है और वलय को वलय के साथ मिलाया जा सकता है। इसे सजीव पेड़ों के वृक्ष–वलय स्वरूप से समय में पीछे जाते हुए पूरे क्षेत्र के लिए कालक्रम का निर्माण किया जा सकता है। इस प्रकार से लकड़ी के क्रमिक पुराने नमूनों के वृक्ष–वलयों के मिलान से एक क्षेत्र या प्रदेश के लिए कई हजार वर्ष पूर्व तक का मूल वृक्ष–वलय विभिन्नता चार्ट तैयार किया जा सकता है। इस प्रकार प्राचीन संरचनाओं को लकड़ी के मिलान द्वारा ज्ञात किया जा सकता है। वृक्षकालानुक्रामिकी की सहायता से, पुरातत्व स्थलों से प्राप्त अज्ञात युग के काष्ठ या लकड़ी के लटठो के नमूने को उनके वृक्ष–वलय स्वरूपों का मूल वृक्ष–वलय स्वरूप कालक्रम के साथ विपरीत मिलान करके उनकी तिथी निर्धारित की जा सकती है

इसे अनुप्रस्थ तिथि–निर्धारण के रूप में जाना जाता है और इसे वृक्षकालानुक्रामिनी का मौलिक सिद्धांत माना जाता है। अनुप्रस्थ तिथि–निर्धारण द्वारा दी गई सटीकता के बिना, वृक्ष वलय की तिथि–निर्धारण एक सामान्य वलय गिनती से ज्यादा कुछ नहीं होगा। जब तक कंप्यूटर का सांख्यिकीय मिलान करने के लिए उपयोग नहीं किया जाता था तब प्रारंभ में अनुप्रस्थ तिथि–निर्धारण दृश्य निरीक्षण द्वारा किया जाता था।

एक क्षेत्र के वृक्ष–वलय मूल चार्ट को आज के सजित पेड़ों के स्वरूप को क्रमिक पुराने पेड़ों के लटठों से मिलान कर के तैयार किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, 200 वर्ष पुराने पेड़ से शुरुआत करें जिसे आज काटा हो तो दो शताब्दियों के वृक्ष वलय विभिन्नता का स्वरूप अभिलिखित किया जा सकता है। 1900 में बनाए गए घर, अस्तबल या पशु–फार्म के उपयोग के लिए कटा हुआ लकड़ी का लठ्ठ, पेड़ के पहले सौ साल के वलयों से मेल करेगा, लेकिन यदि यह लठ्ठ भी 200 वर्ष पुराना हो तो दोनों संयुक्त रूप से पीछे 1700 तक वलयों का निरंतर अनुक्रम प्रदान करेंगे। इस तरह से वृक्ष वलय कालक्रम को समय में पीछे की और बढ़ाया जा सकता है चूंकि पुराने लकड़ी के लठ्ठ लगातार पाए जाते है और उनके वृक्ष वलय स्वरूप एक क्षेत्र के नये पैदा के साथ मेल खाते हैं। चित्र–4 में एक क्षेत्र के मूल वृक्ष वलय कालक्रम बनाने के लिए हाल ही में शुरूआत करके क्रमिक पुराने पेड़ों के वृक्ष वलय स्वरूपों के मिलान का एक उदाहरण दिया गया है।

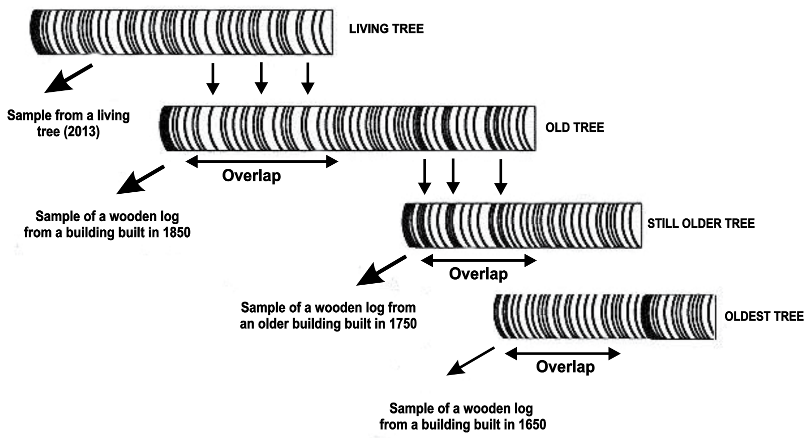

चित्रः 4 क्रमिक पुराने पेड़ों के वृक्ष वलय स्वरूपों का मेल कर के एक क्षेत्र का मूल वृक्ष वलय रेखा–चित्र बना कर के उसे अज्ञात काल के लकड़ी के लटठों का तिथि–निर्धारण किया जा सकता है।

दुनिया के कुछ हिस्सों में असाधारण लंबे जीवन वाले पेड़, जैसे कि ब्रिस्टल कॉन पाइन पेड़ *(पिनस अरिस्टाटा)* और सिक्वॉइअ पेड़ *(सेक्यूएडेंड्रान गिगांटेनम)* वृक्षवलय कालक्रमों की विकसित करने के लिए बहुत उपयोगी साबित हुए हैं। सबसे पुराने सजीव ब्रिस्टल कॉन पाइन पेड़ 4900 वर्ष पुराने हैं। ब्रिस्टल कॉन पाइन पेड़ के आधार पर एक पूरी तरह स्थित कालक्रम जो 8500 वर्षों पीछे तक फैला हुआ है इसका विकास दक्षिण–पश्चिम अमेरिका या कैलिफोर्निया के व्हाइट मांडर्टन के लिए फर्ग्यूसन और ग्रेबिल (1983) द्वारा किया गया था। वृक्ष वलय कालक्रम जो 11000 वर्षों के पूर्व तक फैला हुआ है, दक्षिण जर्मनी की नदीयां ओक पेड़ और उत्तरी आयरलेंड के पाइन के लिए उपलब्ध हैं (मैकगार्न और अन्य, 1955 ; फ्रीड्रिच और अन्य, 2004)।

परिसीमनः वर्तमान में वृक्ष वलय तिथि निर्धारण पद्धति का सीमित अनुप्रयोग है। ऐसा इसलिए है क्योंकि यह सुनिश्चित होना चाहिए कि पूरे क्षेत्र में जलवायु लगभग समान थी, जिसमें से मूल चार्ट तैयार किया गया था, इससे पहले की पद्धति का प्रभावी ढंग से उपयोग किया जा सकता है। वृक्षकालानुक्रमिकी उन क्षेत्रों में लागू होती है जहाँ जलवायु में प्रर्याप्त मौसमी भिन्नता दिखती हैं। उन क्षेत्रों के पेड़ों के लिए, जहाँ जलवायु या वर्षा में कम मौसमी भिन्नता होती हैं, वृक्षकालानुक्रमिकी तिथि निर्धारण वहां उपयुक्त नहीं है। इस पद्धति की सीमा सीमित है क्योंकि अभी तक मूल वृक्षवलय कालक्रम स्वरूप वर्तमान से 11,000 से 12,000 वर्षों पूर्व तक ही विकसित किया गया है।

अपनी प्रगति जांचे

4. एक बहुत लंबे जीवन वाले पेड़ का नाम दें जो वृक्ष वलय कालक्रम को समझने में उपयोगी है।

....

....

....

....

5.2.2 विकिरणमापिक (रेडियोमेट्रिक) काल निर्धारण पद्धतियाँ

चट्टानों के लिए अधिकांश निरपेक्ष तिथियाँ विकिरणमापिक पद्धतियों की सहायता से प्राप्त की जाती हैं। विकिरण मापिक कालनिर्धारण पद्धतियाँ इस तथ्य पर आधारित होती हैं कि प्रत्येक रेडियोधर्मी तत्व क्षय होते हैं। रेडियोधर्मी क्षय वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा विकिरण और कण उत्सर्जित करके ''मूल'' समस्थानिक एक ''व्युत्पन्न'' समस्थानिक में बदल जाता है। कुछ रासायनिक तत्वों के परमाणुओं के विभिन्न रूप होते है जिन्हें समस्थानिक कहा जाता है। समस्थानिक तत्व का एक वैकल्पिक रूप है जिसकी परमाणु संख्या समान है लेकिन द्रव्यमान संख्या भिन्न है। उदारहण के लिए जब ''मूल'' यूरोनियम 238 अणु क्षय हो जाता है तो यह उप–परमाणतिक कण, ऊर्जा और ''व्युत्पन्न'' तत्व लेड 206 उत्पन्न करता है। प्रत्येक रेडियोधर्मी तत्व इसके लिए विशिष्ट ज्ञात स्थिर दर पर क्षय होता है। क्षय की दर समस्थानिक के अर्ध–आयु द्वारा वर्णित होती है, जो एक समस्थानिक द्वारा उसके मूल परिमाण के आधे से कम किया जाने के लिए लिया गया समय है। अतः अगर हम अब चट्टानों में मूल और व्युत्पन्न समस्थानिक के अनुपात का माप कर सकें, तो हम गणना कर सकते हैं कि चट्टानों का गठन कब हुआ था।

रेडियोधर्मी समस्थानिक का परमाणु क्षय एक ऐसी प्रक्रिया है जो घड़ी की तरह व्यवहार करती है और इस प्रकार चट्टानों को निरपेक्ष आयु निर्धारित करने के लिए एक उपयोगी उपकरण है। विकिरण मापिक कालनिर्धारण ने हमें हमारे ग्रह के इतिहास के पुनर्निमाण के लिए एक शक्तिशाली उपकरण प्रदान किया है। यह विचार कि भूगर्भीय संरचनाओं की आयु के माप के रूप में रेडियोधर्मिता का उपयोग किया जा सकता है, का सुझाव पहली बार ब्रिटिश भौतिक विज्ञानी लॉर्ड रदरफोर्ड ने 1905 दिया था। हालांकि, यह प्रथव विश्व युद्ध के बाद वर्णक्रममापी (स्पेक्ट्रोमीटर) का आविष्कार था जिसकी वजह से समस्थानिकों के स्रोत और उसकी सटीक रेडियोधर्मी क्षय दरों की गणना हुई। 20वीं शताब्दी के दूसरे अर्ध–भाग की शुरूआत के बाद से रेडियोधर्मी कार्बन पद्धति, पोटोशियम/आर्गन पद्धति, युरेनियम/लेड् पद्धति, विखण्डन–पथ पद्धति इत्यादि विकसित की गई हैं। यह सभी पद्धतियों समस्थानिक के रेडियोधर्मी क्षय का उपयोग कालनिर्धारण के साधन के रूप में करती हैं। ये पद्धतियाँ अन्य निरपेक्ष कालनिर्धारण पद्धतियों की तुलना में बेहतर हैं क्योंकि रेडियोधर्मी समस्थानिक की दर तापमान दबाव, क्षारीयता, नमी आदि में परिवर्तन से सबसे कम प्रभावित होती है।

5.2.2.1 रेडियोधर्मी कार्बन पद्धति

रेडियोधर्मी कार्बन या कार्बन–14 कालनिर्धारण शायद सबसे पुरानी और सबसे प्रसिद्ध विकिरणमापिक कालनिर्धारण पद्धतियों में से एक है। कुछ मामलों में, रेडियोकार्बन कालनिर्धारण 20वीं शताब्दी विज्ञान की सबसे उल्लेखनीय खोजों में से एक रही है। द्वितीय विश्व युद्व के तुरंत बाद शिकागो विश्वविद्यालय के दिंवगत प्रोफेसर विलार्ड एफ. लिबी ने नेतृत्व में वैज्ञानिकों की एक टीम ने इस पद्धति को विकसित किया था। बाद में 1960 लिबी को रसायन विज्ञान में नोबल पुरस्कार प्राप्त किया। रेडियोकार्बन कालनिर्धारण पुरातत्वविदों और पुरानृविज्ञानी के लिए व्यापक रूप से उपलब्ध पहली कालमापिकी तकनीक थी जो विशेष रूप से उपयोगी थी, क्योंकि इसके शोधकर्ताओं के लिए यह संभव कर दिया कि वे पुरामानवविज्ञान और पुरातात्विक स्थलों पर अक्सर पाए जाने वाले जैविक अवशेषों को तत्काल दिनांकित कर सकें। जिसमें जीवाश्मों के अतिरिक्त हड्डी, खोल, लकड़ी और कार्बन आधारित सामग्री से बने शिल्प–तथ्य भी शामिल हैं। इसके विकास ने जीवाश्म और शिल्प–तथ्यों के कालनिर्धारण के लिए एक साधन

उपलब्ध कराके पुरामानवविज्ञान और पुरातत्व में क्रांतिकारी बदलाव किया, जिससे अत्यंत अतिनूतनकाल में मानव की जैविक और सांस्कृतिक विकास की विश्वव्यापी कालक्रम की स्थापना संभव हो सकी।

रेडियो कार्बन कालनिर्धारण एक विकिरणमापिक कालनिर्धारण पद्धति है जो जैविक सामग्री जैसे हड्डी, दांत, लकड़ी इत्यादि की आयु का अनुमान लगाने के लिए कार्बन–14 (सामान्य कार्बन का एक समस्थानिक) के क्षय का उपयोग करती है। कार्बन के तीन प्रमुख समस्थानिक हैं जो स्वाभाविक रूप से पाए जाते हैं, जैसे, C^{12}, C^{13} (दोनों स्थिर) और C^{14} (अस्थिर या रेडियोधर्मी)। वायुमंडल में इन समस्थानिकों की सघनता इस प्रकार निम्नानुसार है : C^{12}–98.89 प्रतिशत, C^{13} 1–11प्रतिशत और C^{14}–0.0000000010 प्रतिशत.। इस प्रकार प्रकृति में, सजीव सामग्री में प्रत्येक 1,000,000,000,000 कार्बन अणुओं (C^{12}) के लिए एक रेडियोधर्मी कार्बन अणु (C^{14}) मौजूद होता है। रेडियोकार्बन पद्धति रेडियोधर्मी या अस्थिर कार्बन–14 समस्थानिक (C^{14}) के क्षय की दर पर आधारित होती है। C^{14} की अर्ध– आयु लगभग 5,730 वर्ष है, जिसके दौरान C^{14} इसकी मूल परिमाण का आधा हो जाता हैं। इस प्रकार वायुमंडल में C^{14} की सघनता हजारों वर्षों में काफी कम होने की उम्मीद की जा सकती है। हालांकि यह ऐसा नहीं है क्योंकि C^{14} लगातार ब्रह्मांडीय किरण गतिविधि द्वारा पृथ्वी के वायुमंडल के निचले समताप मंडल और ऊपरी क्षोभ–मंडल में उत्पादित होता है। इसलिए इसकी सघनता वायुमंडल में मोटे तौर पर स्थिर बनी हुई है।

ऊपरी वायुमंडल में बह्मंडीय किरणें न्यूट्रान उत्पन्न करते हैं जो नाइट्रोजन अणुओं से टकराते हैं जिसके परिणामस्वरूप एक प्रोटॉन और एक इलेक्ट्रान के नुकसान से एक रेडियोधर्मी कार्बन C^{14} अणु का निर्माण होता है।

बह्मांडीय किरणें $\rightarrow$ न्यूटॉन $\rightarrow$ $N_7^{14}\ C_6^{14}$ + प्रोटॉन

कार्बन–14 पूरे वायुमंडल में समान रूप से फैलता है और कार्बन डाइऑक्साइड ($C^{14}O_2$) में ऑक्सीकरण करने के लिए ऑक्सीजन के साथ रासायनिक परिवर्तन पैदा करता है। यह समुद्र में भी घुल जाता है। वायुमंडलीय कार्बन डाइऑसाइड के अणुओं में मौजूद रेडियोकार्बन जैविक कार्बन चक्र में प्रवेश करता हैं। यह प्रकाश संश्लेषण के दौरान हरे पौधों द्वारा हवा से अवशोषित होता है और फिर खाद्य श्रृंखला के माध्यम से जानवरों को हस्तांतरित होता है। रेडियोकार्बन एक जीवन में धीरे–धीरे क्षय हो जाता है और खोए हुए परिमाण लगातार भोजन और हवा के माध्यम से इसकी आपूर्ति हो जाते हैं। जीव की मृत्यु के बाद, कार्बन–14 का अवशोषण समाप्त हो जाता है और रेडियोधर्मी कार्बन की कोई आपूर्ति नहीं होती है (चित्र 5)।

इसके परिणामस्वरूप, इसके ऊतकों में रेडियोधर्मी की मात्रा लगातार कम हो जाती है। चूंकि कार्बन–14 का क्षय निरंतर दर से होता है, उस तिथि का अनुमान जिस पर एक जीव की मृत्यु हो गई है, उसके अवशिष्ट रेडियोकार्बन की मात्रा को मापकर और वायुमंडल में उपलब्ध स्तरों की तुलना करके लगाया जा सकता हैं। अंततः कार्बन–14 5730 ± 40 वर्षों के अर्ध– आयु के साथ नाईट्रोजन में बीटा–क्षय हो जाता है।

रेडियोकार्बन कालनिर्धारण एक नमूने में रेडियोकार्बन से स्थिर कार्बन के अनुपात को सटीक रूप से मापकर काम करता है। यह निम्नलिखित तीन तरीकों में से किसी एक से किया जा सकता है : 1. गैस आनुपातिक गणना, 2. द्रव प्रस्फुरण गणना, 3. त्वरित्त द्रव्यमान स्पेक्ट्रोमेट्री वर्ण क्रमिकी। इनमें से प्रत्येक पद्धति का उद्देश्य एक नमूने में रेडियोकार्बन से स्थिर कार्बन का अनुपात का पता लगाना है। इस माप से

रेडियोकार्बन वर्षों में आयु की गणना की जाती है। यह पद्धति आमतौर पर 50,000 वर्षों तक उपयोगी आयु अनुमान प्रदान कर सकती है जिसके बाद रेडियोकार्बन की मात्रा सटीक रूप से मापने के लिए बहुत कम होती है। नवीनतम परिष्कृत तकनीक का उपयोग करके इसकी पहुँच को अधिकतम 70,000 वर्षों तक बढ़ाया जा सकता है।

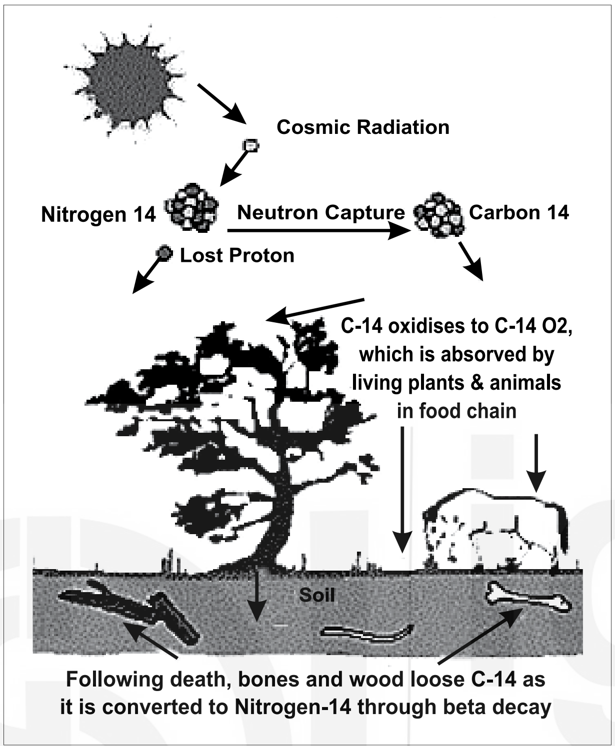

चित्र : 5 खाद्य श्रृंखला में कार्बन चक्र का आरेखण प्रस्तुतिकरण

(संशोधितः http://www.theenergylibrary.com/node/11296) / 11296)

परिसीमन :

1. क्योंकि यह पद्धति प्रत्यक्ष रूप से जैविक सामग्री पर लागू होती है, इसलिए किसी भी महत्व के जीवाश्मों पर इस पद्धति को लागू नहीं किया जा सकता है क्योंकि इसमें नमूने का आंशिक या पूर्ण क्षति शामिल हैं।

2. इस पद्धति की सीमा आमतौर पर 50,000 वर्ष है; इसलिए पुराने जीवाश्मों के लिए उपयुक्त नहीं है।

3. यह धारणा कि वायुमंडल में रेडियोधर्मी कार्बन की मात्रा स्थिर है बिल्कुल सही नहीं है क्योंकि यह ज्ञात है कि यह 6000 वर्ष से अधिक पुराना था। ब्रह्मांडीय विकिरण की तीव्रता में परितर्वन या पृथ्वी के चुंबकीय क्षेत्र में परिवर्तन इन परिवर्तनों के लिए जिम्मेदार हो सकते हैं। जीवाश्म ईंधन जलने के प्रभाव के कारण भिन्नताएं भी हो सकती हैं (जिसे इसके आविष्कारक हंस सुएस के नाम पर सुएस प्रभाव भी कहा जाता है, जिन्होंने 1965 में इसकी सूचना दी थी) और जमीन के ऊपर परमाणु परीक्षण जिसने अतिरिक्त C^{14} का सर्जन किया (जिसे कभी–कभी 'बम कार्बन' भी कहा जाता है)।

4. आधुनिक सामग्रियों के द्वारा नमूनों के प्रदूषित होने की हमेशा संभावना रहती है जैसे, भूलहीन अनाधिकार प्रवेश के माध्यम से, क्षेत्र या प्रयोगशाला में नमूने का संचालन (उदाहरण के लिए, आधुनिक कार्बनिक पदार्थ जैसे तंबाकू, राख, बाल या रेशा का संयोगवश प्रवेश होना) संभावित रूप से नमूने की आयु को प्रभावित कर सकता हैं।

इन परिसिमनों के बावजूद रेडियोकार्बन उत्तर नूतन काल या नई जैविक सामग्रियों की तिथि निर्धारित करने के लिए एक उपयोगी तकनीक बनी हुई है।

5.2.2.2 पोटैशियम/आर्गन कालनिर्धारण पद्धति

पोटैशियम/आर्गन कालनिर्धारण पद्धति चट्टानों के लिए सबसे व्यापक रूप से उपयोग किए जाने वाली विकिरणमापिक कालनिर्धारण पद्धतियों में से एक है विशेष रूप से आग्नेय, जो पिघले हुए लावा से ठोस बन गये हैं। यह भूवैज्ञानिक, पुरातात्विक और पुरामानववैज्ञानिक जाँच के लिए एक अमूल्य पद्धति है। यह तकनीक पुरातत्वविदों और पुरानृविज्ञानविदों के लिए बहुत उपयोगी है जब लावा का बहाव या ज्वालामुखीय चट्टानें उस सतह पर परतें बना देती है जो मानव गतिविधि के प्रमाण से संबंधित होता है। यह पद्धति खनिज और चट्टानों में रेडियोधर्मी पोटैशियम 40 (^{40}K) के क्षय से आर्गन 40 (Ar^{40}) में परिवर्तन होने पर आधारित है। ज्वालामुखीय चट्टान के नमूने में आर्गन(Ar^{40}) के अनुपात में K–40 की तुलना करके और K–40 की क्षय दर को जानकर, जिस समय पर चट्टान का गठन हुआ था, का अनुमान लगाया जा सकता है।

पोटैशियम ^{39}K पृथ्वी की भूमि–परत में सबसे प्रचुर मात्रा में पाए जाने वाले तत्वों में से एक है। पोटैशियम के तीन स्वाभाविक रूप से पाए जाने वाले समस्थानिक अर्थात ^{39}K (93.2581%), ^{40}K (0.0117%) और ^{41}K (6.7302%) हैं। इन समस्थानिकों में से, K–40 दो व्युत्पन्न तत्वों' के अनुमानित अनुपात 89:11 में क्षय हो जाता है : स्थिर^{40} केल्शियम और ^{40}आर्गन। केवल यह कहा जा सकता है, कि हर 100 ^{40}K परमाणु जो क्षय होते है वह ज्वालामुखीय चट्टानों के खनिजों के दानों में फंसा रहता है। जब मैग्मा पिघला हुआ होता है तो जो भी कुछ आर्गन बनता है वह भाप बनकर वायुमंडल में उड़ जाता है। हालांकि, शीतलन और ठोसकरण के बाद जब लावा चट्टान बन जाता है, ^{40}K के क्षय के कारण उत्पादित आर्गन चट्टान के भीतर जमा होता है और चट्टान की विकिरणमापिक घड़ी शुरू हो जाती है। जैसे–जैसे चट्टान पुरानी होती जाती है, यह अधिक से अधिक ^{40}Ar परमाणु संचित करता है। ^{40}Ar परमाणुओं की मात्रा को मापा जाता है और ज्वालामुखी चट्टान नमूने के ठोसकरण के बाद से गुजरने वाले समय की गणना करने के लिए उपयोग किया जाता है।

^{40}K की अर्ध–आयु अवधि 1,300 मिलियन वर्ष या 1.3 अरब वर्ष है, यानि इस समय रेडियोधर्मी पोटैशियम 40 की मात्रा इसकी मूल मात्रा की आधा हो जाती है। अपने लंबे अर्ध– आयु के कारण, यह पद्धति ग्रहों की आयु का अनुमान लगाने के लिए भी बहुत उपयुक्त है। हालांकि यह 100,000 हजार साल से कम आयु के चट्टानों को मापने के लिए उपयुक्त नहीं हो सकता है क्योंकि इस समय तक उत्पादित आर्गन की मात्रा सटीक रूप से मापने के लिए बहुत कम है। इस पद्धति में 1500 से 2000 डिग्री सेल्शियस के तापमान पर एक विद्युत चाप के निर्वात तंत्र में चट्टानों के नमूने को पिघलाना शामिल है। ^{40}Ar की मात्रा को द्रव्यमान वर्णक्रममापी से मापा जाता है क्योंकि एक पूर्ण निर्वात बनाना मुश्किल है। वायुमंडल में आर्गन लगभग 0.93 प्रतिशत है। हालांकि हम दूषित करने वाली वायुमंडलीय आर्गन परमाणु की संख्या पा सकते है क्योकि Ar^{36} एक स्वाभाविक रूप से पाया जाना वाला एक समस्थानिक होता है जोकि 96.6 प्रतिशत ^{40}Ar : 0.34 प्रतिशत ^{36}Ar के अनुपात से होता है।

^{36}Ar परमाणुओं की संख्या की गिनती करके हम प्रदूषित करने वाले वायुमंडलीय ^{40}Ar परमाणुओं की संख्या का अनुमान लगा सकते हैं, जिन्हें चट्टान नमूने के पिघलाने

से निर्मुक्त ^{40}Ar परमाणुओं की वास्तविक मात्रा प्राप्त करने के लिए आर्गन परमाणुओं की कुल संख्या से घटाई जाती है। इस संख्या का उपयोग चट्टान की आयु की गणना के लिए किया जाता है। प्रारंभिक होमिनिड स्थलों के कालनिर्धारण के लिए इस पद्धति का व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है जहाँ होमिनिड गतिविधि दो लावा प्रवाहों के बीच स्तरित रूप से किया गया है, विशेष रूप से पूर्वी अफ्रीका में। इन स्थलों में से सबसे प्रसिद्ध शायद ओल्डवाई गार्ज का तल 1 है, जो शायद इस पद्धति के सबसे शुरुआती अनुप्रयोगों में से एक को प्रस्तुत करता है। इस पद्धति का उपयोग इथोपिया में हादर के स्थल के कालनिर्धारण के लिए भी किया गया था, जो *आस्ट्रेलोपिथेक्स अफरेन्सिस* की खोज के लिए प्रसिद्ध है, *जिसे लुसी* के नाम से जाना जाता है।

परिसीमन :

1. यह पद्धति चट्टानों पर लागू होती है न की जीवाश्मों पर।
2. यह पद्धति ज्वालामुखीय उत्पत्ति के चट्टानों के लिए अधिक उपयुक्त है और गैर–ज्वालामुखीय क्षेत्रों के लिए अप्रयोज्य है।
3. यह माना जाना चाहिए कि ^{40}K क्षय के कारण उत्पादित समस्त आर्गन चट्टान के भीतर फंसे रह जाते हैं।
4. यह पद्धति किसी भी आग्नेय या ज्वालामुखीय चट्टान के लिए अच्छी तरह से काम करती है, बशर्ते कि चट्टान प्रारंभिक गठन के बाद तापन–पुनः अणिभिकरण प्रक्रिया से गुजरने का कोई प्रमाण न देता हो।
5. 100,000 वर्ष से कम आयु के चट्टानों को इस पद्धति से दिनांकित नहीं किया जा सकता है।

रेडियोकार्बन और पोटैशियम/आर्गन पद्धतियों के अतिरिक्त अन्य निरपेक्ष कालनिर्धारण पद्धतियाँ भी हैं जैसे अमीनो अम्ल पुनः प्रतिरूपण, विखंडन पथ कालनिर्धारण पद्धति, पुराचुंबकीय कालनिर्धारण पद्धति और तापसंदीप्ति कालनिर्धारण पद्धति, जिसका उपयोग पुरातात्विक या पुरामानव वैज्ञानिक स्थलों की आयु जानने के लिए कर सकता है।

5.2.3 अमीनो अम्ल पुनः प्रतिरूपण

यह इस तथ्य पर आधारित है कि अमीनो अम्ल, जैसे की आइसोल्यूसीन, हड्डियों दांतों या अन्य जैविक अवशेषों में मौजूद होना है, जीव की मृत्यु के बाद, समय के साथ एल–फॉर्म से डी–फार्म में क्रमिक परितर्वन (रेसमिशन) से गुजरता है। आयु को इंगित करने के लिए दोनों का अनुपात मापा जाता है।

5.2.4 पुराचुंबकीय कालनिर्धारण

पृथ्वी का चुंबकीय क्षेत्र समय के साथ बदलता रहता है, इसलिए चुंबकीय उत्तरी ध्रुव स्थिति बदलता है। निक्षेप के समय लौह–चुंबकीय कण उस काल के चुंबकीय क्षेत्र को हासिल करते हैं और इसकी दिशा में भी सरेखित होते हैं। इस पद्धति में एक स्तरीकृत स्तंभ को चट्टान परतों के पुराचुंबकीय क्षेत्रों की दिशा का माप ले कर और फिर उसके नमूने की स्तरीकृत भाग, जिसका काल संबंध बेहतर समझा गया है, कि

पुराचुंबकीय उत्क्रमण नमूने के साथ मिलान करना होता है। आमतौर पर इसके लिए एक निरपेक्ष तिथि की आवश्यकता होती है जिसका प्रयोग अदिनांकित स्तंभ को अच्छी तरह से दिनांकित स्तंभ के साथ मेल करने के लिए है।

5.2.5 तापसंदीप्ति कालनिर्धारण

तापसंदीप्ति कालनिर्धारण इस धारणा पर आधारित है कि स्वाभाविक रूप से पाए जाने वाले रेडियोधर्मी तत्वों जैसे युरेनियम $_{U}238$ और थोरियम $_{Th}232$, मिट्टी और चट्टानों में मौजूद ऐसे तत्व होते हैं जो इलेक्ट्रॉनों को छोड़ते हैं जो खनिजों के क्रिस्टल जाली दोषों में एक उच्च ऊर्जा स्तर पर निर्भर रहते हैं, जो अचानक नियंत्रित हीटिंग के रूप में ऊर्जा को लागू करके अपने बंधन से मुक्त हो सकते हैं। यह इलेक्ट्रोनों के नियुक्ति का कारण बनता है, जो दृश्यमान प्रकाश या तापक संदीप्ति के रूप में देखा जा सकता है और जिसे मापा जा सकता है। जितना पुराना नमूना, उतने अधिक मात्रा में इलेक्ट्रोन और अधिक से अधिक तापक संदीप्तिता होगी यह पुरातात्विक नमूनों जैसे की पके मृदभांड की तिथि निर्धारण के लिए बहुत उपयोगी है।

अपनी प्रगति जांचे

5. कुछ विकिरणमापिक कालनिर्धारण पद्धतियों का नाम बताऐं।

....

....

....

....

5.3 सारांश

कालनिर्धारण पद्धतियाँ, जीवाश्मों और शिल्प–तथ्यों को एक कालक्रम रूपरेखा में रखकर पुरातात्विक और पुरामानवविज्ञान जाँच में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। एक जीवाश्म या शिल्प–तथ्य पुरातात्विक दृष्टिकोण से अधिक उपयोगी होता है, अगर हम यह पता लगा सके कि यह कितना पुराना है। अब कई कालनिर्धारण पद्धतियाँ उपलब्ध हैं जिनका उपयोग जीवाश्म, शिल्प–तथ्य या चट्टानों जिनसे इन्हें पुनर्प्राप्त किया गया था, के तिथि निर्धारण के लिए किया जा सकता है। इन्हें व्यापक रूप से सापेक्ष या निरपेक्ष कालनिर्धारण पद्धतियों में समूहीकृत किया जा सकता है। सापेक्ष कालनिर्धारण पद्धतियाँ, जैसे स्तर विज्ञान और फ्लोरीन पद्धतियां हमें अतीत की घटनाओं और वस्तुओं के सापेक्ष अनुक्रम को निर्धारित करने में मदद करती हैं, उनकी सटीक आयु जाने बिना। दूसरी ओर निरपेक्ष कालनिर्धारण पद्धतियाँ हमें वर्तमान से कई वर्षों पूर्व एक सैंपल या घटना की सटीक आयु उपलब्ध कराती हैं। निरपेक्ष कालनिर्धारण पद्धतियाँ अविकिरणमापिक या विकिरणमापिक हो सकती हैं। वृक्षकालानुक्रमिकी, पुराचुंबकीय कालनिर्धारण पद्धति और अमीनों अम्ल पुनः प्रतिरूपण सामान्यता अविकिरणमापिक निरपेक्ष कालनिर्धारण पद्धतियों में से कुछ हैं। विकिरणमापिक पद्धतियाँ जैसे रेडियोकार्बन, पोटैशियम/आर्गन, विखंडन पथ पद्धतियाँ कुछ तत्वों के रेडियोधर्मी समस्थानिक के क्षय पर आधारित होती हैं। अफ्रीका में कुछ महत्वपूर्ण होमिनिड स्थलों की आयु जानने के लिए विकिरणमापिक पद्धतियों का प्रभावी ढंग से उपयोग किया गया है।

5.4 संदर्भ

ब्लॉट, एच., बेरी, डब्ल्यू. बी., एंड ब्रांडे, एस. (1991). *प्रिन्सिपल्स आफ स्ट्रेलिग्राफिक एनलासिस.* बॉस्टन : ब्लैकवेल साइंटफिक पब्लिकेशन.

फर्ग्यूसन, सी. डब्ल्यू एंड ग्रेबिल, डी. ए. (1983). *डेंड्रीक्रोनोलॉजी आफ ब्रिस्टलेकोन पाइन. रेडियोकार्बन,* 25 (2) : 287–8.

फ्रेडरीक, एम. रेममेले, एस., क्रोमर, बी., हॉफमैन, जे., स्पर्क, एम. केसर, के. एफ., एंड कुप्पर, एम. (2004)– द 12,460–इयर होहेनहेम ओक एंड पाइनट्री–रिंग क्रोनोलॉजी फ्राम सेंट्रल युरोप– ए यूनिक एनुअल रिकार्ड फार रेडियोकार्बन कैलिब्रेशन एंड पेलियोइनवायमेंटल रिकंसट्रक्शन, *रेडियोकार्बन,* 46 (3) 1111–1112.

गुड्रम, एम. आर., एंड ओल्सन, सी. (2009). द क्वेस्ट फॉर एन एब्सलूट क्रोनोलॉजी इन ह्युमन प्रीहिस्ट्री : एंथ्रोपॉलजिस्ट, केमिस्ट्स एंड द फ्लोरिन डेटिंग मैथड इन पेलियोएंथ्रोपोलॉजी. *द ब्रिटिश जर्नल फॉर द हिस्ट्री ऑफ साइंस,* 42 (1), 95–114.

हार्लेंड, डब्ल्यू. बी., आर्मस्ट्रांग, आर. एल., कॉक्स, ए. टी., क्रेग, एल. ई. स्मिथ, डी. जी., एंड स्मिथ, ए. जी. (1990). *ए जियोलॉजिकॅल टाइम स्केल 1989.*कैंब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस.

मैक्गोवर्न, पी.ई,. सेवर, टी.एल,. मायर्स, जे.डब्लू., मायर्स, ई.ई बेवेन, बी.,मिलर, एन.एफ. ,... एंड बॉवमैन, एस.जी (1995). साइंस इज आर्कियोलॉजीः अ रिव्यूव. *अमेरिकन जर्नल ऑफ आर्कियोलॉजी,* 99 (1), 79–142.

ओकले, के. पी. (1950). *रेलेटिव डेटिंग आफ पिल्टडाउन स्कल. अंडवान्समेंन्ट आफ साइंस.* (6) : 343–344.

ओकले, के. पी. (1964). *फ्रेमवर्कस फोर डेटिंग फॉसिल मैन.* यूएसए : ट्रांसेक्शन पब्लिशर्स.

नोलर, जे. एस., सोवर्स, जे एम., एंड लेटिस, डब्ल्यू. आर. (संपा) (2000) *क्वॉटॅनरी जिओक्रानोलाजीः* मैथइस एंड एप्लिकेशन्स (खंड़–4)-वाशिंगटन डी.सीः अमेरिकन जियोफिजिकल युनियन.

वाकर, एम., एंड वाकर, एम. जे. सी. (2005). *क्वॉटेनरी डेटिंग मैथेड्स,* इंग्लैंडः जॉन विली एंड संस.

वोनर, जे. एस. ओकले, के. पी., एंड क्लार्क, डब्ल्यू. ई. एल. जी. (1953). द *सलुशन ऑफ द पिल्टडाउन प्रॉब्लम* (वालयूम 2, न. 3). ब्रिटिश म्यूजियॅम (नैचरल हिस्ट्री).

5.5 आपकी प्रगति की जांच के लिए उत्तर

1. दो प्रकार के कालनिर्धारण पद्धतियाँ है : सापेक्ष कालनिर्धारण पद्धति और निरपेक्ष कालनिर्धारण पद्धति हैं।

2. स्तर विज्ञान मूलरूप से स्तरित मिट्टी और चट्टानों के अनुक्रम, सरंचना और संबंध का अध्ययन है।

3. निरपेक्ष कालनिर्धारण पद्धतियाँ तिथि पत्र प्रणाली के संदर्भ में एक संख्यात्मक आयु उपलब्ध कराता है।

4. ब्रिस्टल कॉन पाइन पेड़ (पिनुसरिस्टाटा) का असाधारण रूप से लंबा जीवन है और पेड़ के वक्ष–वलय कालक्रम विकसित करने के लिए बहुत उपयोगी साबित हुआ है।

5. कुछ विकिरणमापिक कालनिर्धारण पद्धतियाँ रेडियोधर्मी कार्बन, पोटैशियम/आर्गन पद्धति यूरोनियम/लेड पद्धति और विखंडन पथ पद्धति हैं।

इकाई 6 : जलवायु पुनर्निर्माण की पद्धतियाँ *

इकाई की रूपरेखा

6.0 परिचय

6.1 जलवायु पुनर्निर्माण की पद्धतियाँ

- 6.1.1 कालनिर्धारण पद्धतियाँ
- 61.2 यंत्रीय जलवायु डेटा विधियां
- 6.1.3 ऐतिहासिक प्रलेख अभिलेख
- 6.1.4 वृक्ष कालानुक्रमिकी
- 6.1.5 प्रवाल प्रमाण
- 6.1.6 हिमतत्व अभिलेख (आइसकोर रिकार्ड)
- 6.1.7 गुहा गौण निक्षेप (गुफा जमाव)
- 6.1.8 अनुवर्ष स्तरीत झील और सागर तलघट प्रमाण
- 6.1.9 बेघन छिद्र (बोर होल्स)
- 6.1.10 हिमानी प्रमाण

6.2 वनस्पति साक्ष्य का उपयोग कर जलवायु की पुर्नरचना

- 6.2.1 वृहत वानस्पतिक प्रमाण
  - 6.2.1.1 वृहत वानस्पतिक अवशेषों की पहचान के लिए उपयोग की जाने वाली विधियाँ
- 6.2.2 सूक्ष्म वानस्पतिक
  - 6.2.2.1 बीजाणु
  - 6.2.2.2 परागकण
  - 6.2.2.3 पादपाश्म
  - 6.2.2.4 डायटम
  - 6.2.2.5 स्टार्च के दाने

6.3 जीव–जंतु प्रमाणों का उपयोग कर जलवायु की पुर्नरचना

6.4 सारांश

6.5 संदर्भ

6.6 आपकी प्रगति की जांच के लिए उत्तर

*डॉ. एस.ए.ए. लतीफ, विजिटिंग साइंटिस्ट, जेनटिक्स एवं बॉयोटेक्नोलॉजी विभाग, उस्मानिया विश्वविद्यालय, हैदराबाद

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

अधिगम के उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप सक्षम होंगे :

- जलवायु की रचना के महत्व को समझने में;
- जलवायु की रचना को पद्धतियों में चर्चा करने में ;
- वनस्पति साक्ष्य का उपयोग कर जलवायु की रचना स्पष्ट करने में ; और
- जीव–जंतु साक्ष्य का उपयोग कर जलवायु की रचना के बारे में बात करने में।

6.0 परिचय

जलवायु को दुनिया के एक परिभाषित क्षेत्र में प्रचलित तापमान और वर्षा के माध्य और श्रेणी के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। (दिनाकाउज 2000ए) जलवायु, स्थान और समय के साथ बदलती है। जलवायुवीय परिवर्ती के प्रत्यक्ष परिमाण केवल दो शताब्दियों तक जानकारी प्रदान करते हैं। जलवायु परिवर्तनशीलता के अप्रत्यक्ष या प्रतिनिधित्व परिमाणों पर निर्भरता, अतीत के जलवायु की पुनरर्चना की आवश्यकता है। तलछट क्रीड, निम्न संचयन हिम कोड और संरक्षित पराग परिमाणों को सैकड़ों वर्षों के जलवायु परिवर्तन के वर्णन और अक्सर दीर्घकालिक पैमानों के लिए परिसीमा प्रदान करता है। जलवायु संकेतक जैसे कि ऐतिहासिक दस्तावेज, वृक्ष–वलय का विकास और सघनता का परिमाण, प्रवाल, सालाना गठित हिम कोर, स्तरित महासागर और झील तलछट क्रीड और गुहा गौण निक्षेप से पिछले शताब्दियों के साल दर साल जलवायु के प्रतिरूप का वर्णन पाया गया (जोन्स एवं मान, 2004)। चूंकि अतीत जलवायु पर साक्ष्य सीधे उपलब्ध नहीं है, इसलिए अतीत के जलवायु की पुनर्रचना के लिए कई स्रोतों से साक्ष्य जमा करना और बहुनिषेध अवधारणाओं और तकनीक के एकीकरण की भी आवश्यकता है (दिनाकाउज, 2000बी)। अतीत के पर्यावरण परिवर्तन और परम कारण के बीच की कड़ी को पर्यावरण प्रणाली प्रतिक्रिया द्वारा समझा जाता है जो समयांतराल के माध्यम से स्थानिक और सामाजिक परिवर्तनों में अंतराल, निरपेक्ष तिथियों को प्राप्त करने और पर्यावरणीय परिवर्तनों में परिवर्तनशीलता से जुड़ी कठिनाइयाँ से पर्यावरण के कार्य–कारण संबंधों को अस्पष्ट कर देता है।

अप्रत्यक्ष या प्रतिनिधित्व साक्ष्य परिवर्तन के विभिन्न कारणों को इंगित करता है। परिवर्तन के कारण की जानकारी अतीत के पर्यावरण और पर्यावरण परिवर्तनों को समझने में मार्गदर्शन कर सकता है।

जलवायु पुर्नरचना जानने के लिए उपयोगी है :

- परिवर्तन के प्रति पृथ्वी की प्रतिक्रिया;
- भविष्य की योजना बनाने के लिए;
- अतीत में बदलाव के प्रति मानव प्रतिक्रिया जानने के लिए जो भविष्य में वैश्विक परिवर्तन के प्रति मानव प्रतिक्रिया की भविष्यवाणी करने में सहायता कर सकता है।
- स्थल पर पशुओं के उत्तरजीविता और विलुप्तता को प्रभावित करने वाले चुनिंदा दबावों को समझना;
- शतवर्षीय समय–मापक्रम पर जलवायु परिवर्तन के बढत के बारे में जानकारी उपलब्ध कराना;

- हाल ही के भूमण्डलीय उष्मीकरण को प्राकृतिक जलवायु परिवर्तन के अंर्तगत लाने के लिए; और
- भूमंडलीय जलवायु पर मानव जनित ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन के प्रभावों के सुझाव देना (वाइस, 2001; स्टैनफोर्ड और अन्य, 2009; स्टॉर्च और अन्य, 2009)।

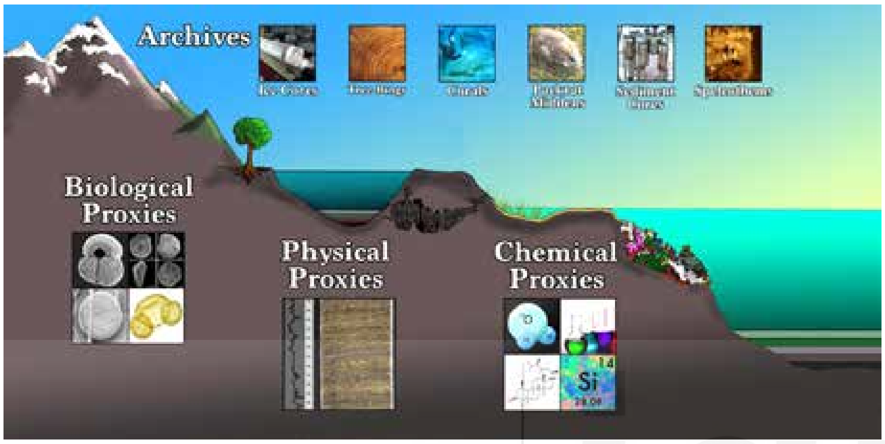

चित्र 1 : अतीत जलवायु का प्रतिनिधित्व

स्रोत https://www2.usgs.gov/climate_landuse/clu_rd/paleoclimate/

अपनी प्रगति जांचे

1. जलवायु को परिभाषित करें। जलवायु पुनर्निर्माण कैसे उपयोगी है?

....

....

....

....

6.1 जलवायु पुनर्निर्माण की पद्धतियाँ

6.1.1 कालनिर्धारण पद्धतियाँ

जीवाश्म (कभी जीवित रहने वाले) अवशेषों की आयु का अनुमान लगाने के लिए कालनिर्धारण पद्धति का उपयोग किया जाता है (स्टैंडफोर्ड और अन्य, 2009)। आयु का अनुमान अतीत के जलवायु का अप्रत्यक्ष संकेत देता है। कालनिर्धारण पद्धतियों को सापेक्ष या निरपेक्ष के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। सापेक्ष कालनिर्धारण पद्ध तियाँ नई और पुरानी सामग्रियों को वर्गीकृत करने के लिए स्तरीकृत संबंधों का उपयोग करती है, स्तर विज्ञान का सरोकार पुरातात्विक स्थलों पर निक्षेप परतों से है। माना जाता है कि अनुक्रम में उच्च परतों की तुलना में गहरी परतें पुरानी होती हैं। (प्राइस, 2007ए) सापेक्ष कालनिर्धारण तकनीकों में अश्म स्तरिक (क्षेत्रों से सहसम्बन्धित होने के लिए चट्टान परतों के गुणों का उपयोग करना), टेफ्रीस्ट्रेटिग्राफी (ज्वालामुखी राख में सूक्ष्मतत्वों के छाप का उपयोग करके विभिन्न स्थलों पर समय तुल्यता को सहसंबधित करना), जैव स्तरिक (पुरातात्विक स्थलों में पाए जाने वाले जैविक सूक्ष्मजीवों की जानकारी का उपयोग कर के स्थलों और क्षेत्रों में काल सहसंबंध करना) और रासायनिक पद्धति (फ्लोरिन, युरेनियम और नाईट्रोजन अंश के विश्लेषण के आधार पर जीवाश्मों की आयु का अनुमान लगाना। यह तकनीक जीवाश्मों या

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

उनके तलछटों के बीच काल को लेकर विवादों को सुलझाने के लिए उपयोगी है।) शामिल हैं (स्टैंडफोर्ड और अन्य, 2009)।

निरपेक्ष कालनिर्धारण पद्धतियाँ तिथिपत्र वर्ष के अनुसार वस्तु का काल निर्दिष्ट करती है (प्राइस, 2007ए)। निरपेक्ष पद्धतियों के अनुसार वर्षो में कालसीमा इस प्रकार है : वृक्षकालानुक्रमिकी (8000), रेडियोकार्बन (100–40,000), रेडियो पोटैशियम (500,000), आर्गन–48 / आर्गन–39 (16 लाख वर्ष तक), यूरिनियम श्रृंखला (30,000–300,000), भूचुंबकत्व और पुराचुंबकत्व (लगभग 2000), तापसंदीप्ति (500,000), इलेक्ट्रान चक्रण अनुकप्पन (1,000,000), लावा काँच जलयोजन (8000) और विखंडन पथ (फिजन ट्रैक) (100,000–1,000,000)। इन पद्धतियों को सिद्धांत के आधार पर चार श्रेणियों में बांटा जा सकता है। ये हैं : परतों का संचय (वृक्षकालानुक्रमिकी और लावा काँच जलयोजन), रेडियो ओर गैर–रेडियोधर्नी क्षय (रेडियोकार्बन, रेडियोपोटैशियम, विखंडन पथ, यूरेनियम श्रृंखला और आर्गन / आर्गन), फंसा हुआ थर्मोलूमिनसिंस (तापसंदीप्ति, इलेक्ट्रान चक्रण अनुकंपन और प्रकाशीय उछीपित संदीप्ति) और चुबकत्व (भूचुंबकीय और पुराचुंबकत्व) (प्राईस, 2007ए) और स्टैडफोर्ड और अन्य, 2009)।

अपनी प्रगति जांचे

2. कालनिर्धारण पद्धतियाँ का क्या अभिप्राय है? इसे कैसे वर्गीकृत किया जाता है?

....

....

....

....

6.1.2 यंत्रीय जलवायु डेटा विधियां

जलवायु परिवर्तन का अध्ययन सामान्य जलवायु तत्वों जैसे तापमान, अवक्षेपण अर्थात वर्षा, हिमपात, ओले, नमी, हवा, धूप और वायुमंडलीय दबाव के विवरण, जो मानक उपकरणें द्वारा प्राप्त किये गए हो का विश्लेषण करके किया जा सकता है। सबसे अधिक मापा जाने वाला तत्व तापमान है। जलवायु अवलोकन में तापमान एक महत्वपूर्ण तत्व है। वर्षा, हालांकि अपेक्षाकृत छोटे भौगोलिक क्षेत्रों और थोड़े समय के लिए तापमान की तुलना में अधिक व्यापक रूप से भिन्न होती है। यंत्रों द्वारा अभिलिखित विवरणों से प्राप्त आंकड़ों को प्रामाणिक माना जाता है। थर्मामीटर द्वारा समुद्र और भूमि क्षेत्रों को मापना यंत्र आंकड़ों में सम्मिलित है। इस पद्धति में समुद्री स्तर के दबाव, महाद्वीपीय और समुद्री अवक्षेपण, समुद्री बर्फ प्रसार, हवाओं और नमी के मापन भी शामिल हैं। इन डेटा स्रोतों का उपयोग लगभग 1850 वर्षों के जलवायु परिवर्तन की व्याख्या करने के लिए किया जा सकता है। आंकड़े पूर्वाग्रह के अधिनिकृत आ जाते हैं जैसे थर्मामीटर मापी में अवशिष्ट शहरी उष्मीकरण और अवक्षेपण के माप के मामले में अवक्षेपण का कम ग्रहण होना। छूटे हुए आंकड़ों को प्रक्षेपित करने के लिए सांख्यिकीय विधियों का उपयोग किया जाता हैं (जोन्स और मान, 2004)।

6.1.3 ऐतिहासिक प्रलेख अभिलेख (डॉक्यूमेंट रिकार्ड)

इन अभिलेखों को प्रतिपत्र जलवायु प्रमाण माना जाता है। इन अभिलेखों में तुषार तिथियॉ, सूखे और अकाल, जल निकायों के हिमीकरण, बर्फ की अवधि और बर्फ के

आवरण पर जानकारी होती है। इन अभिलेखों के आंकड़े यूरोप, पूर्वी एशिया और उतरी अमेरिका से लिए गये थे। यह आंकड़े भूमंडलीय जलवायु भिन्नता का वर्णन करने के लिए शायद उपयोगी नहीं हो सकते हैं और इन्हें कठोर मूल्यांकन के बाद सावधानी से उपयोग किया जाना चाहिए (जोन्स और मान, 2004)।

6.1.4 वृक्ष कालानुक्रमिकी

इस पद्धति में अतीत के मौसमी तापमान या सूखे का पेड़ों के वृक्ष–वलय की चौड़ाई या विलंबित लकड़ी के अधिकतम घनत्व को मापकर अनुमान लगाया जा सकता है। यह पद्धति जलवायु यंत्र अभिलेख के साथ मजबूत सांख्यिकीय सहसंबंध भी दिखाती है। वृक्षकालानुक्रमिकी का विकास एरिजोना विश्वविद्यालय में ए.ई.डगल्स द्वारा किया गया था। यह पद्धति उन क्षेत्रों में उपयोगी है जहां लकड़ी और पेड़ों का बेहतर संरक्षण है, मुख्य रूप से उप ध्रुवीय और मध्य अक्षांश स्थलीय क्षेत्रों में। यह पद्धति अतिरिक्त उष्णकटिबंधीय प्रजातियों तक सीमित है, जहां पेड़ों की अनुप्रस्थ तिथि–निर्धारण और कालक्रम विकास संभव है। पेड़ हर साल एक गहरे और हल्के हिस्से के साथ तने के बाहरी किनारे पर नया चक्र (वलय) बनाते हैं। भारी वर्षा के समय चौड़े चक्र का निर्माण होता है जबकि गर्मियों में संकीर्ण वलय का। ये चक्रिकांए समान प्रजातियों में समान स्वरूप प्रदर्शित करते हैं। पेड़ों के सारभाग और पुरानी लकड़ी में छेद किया जाता है। चूंकि अलग–अलग वृक्षवलय की चौड़ाई वार्षिक वृद्धि के कारण अलग–अलग होती है, एक पेड़ की चक्रिकाओं के अनुक्रम का भाग दूसरे पेड़ के समस्त अनुक्रम या उसके भाग पर अतिव्यापन किया जा सकता है। पुराने पेड़ों को नये पेड़ों के इस क्रम से जोड़कर एक कालक्रम विकसित किया जा सकता है। कालक्रम के साथ नई लकड़ी का मिलान करके पेड़ की आयु स्थापित की जा सकती है। हाल के मुख्य अवलोकनों ने यह सवाल उठाया कि उच्च उंचाई पर सूखे से प्रभावी पेड़ों और संभवता : उंचाई के कारण co_2 सघनता पेड़ों की लकड़ी के घनत्व में परिवर्तन करती है (जोन्स और मान, 2004 और प्राईस, 2007ए)।

चित्र 2 : मौसम परिवर्तन दिखाते हुए पेड़ के तने का अनुप्रस्थ काट
स्रोत :http://iedro.org/articles/fall-of-rom/

6.1.5 प्रवाल प्रमाण

यह पद्धति वृक्षकालानुक्रमिकी का पूरक है। प्रवाल विवरण वार्षिक और मौसमी विवरण के कालनिर्धारण की संभावना प्रदान करते हैं और अन्य पद्धतियों की तुलना में एकसमान जलवायु की जानकारी भी प्रदान करते हैं। सदियों पुराने जीवाश्म विवरण और कई दशकों

के आंकड़े के इस्तेमाल से सहस्र वर्षों के जलवायु की पुनर्रचना की जा सकती है। यह पद्धति प्रवाल के एरोगनाइट संरचना जैसे स्ट्रोंटियम/कैल्शियम अनुपात में भिन्नता, ऑक्सीजन समस्थानिक, प्रतिदीप्ति के घनत्व और भिन्नता के बारे में जानकारी का उपयोग करके पर्यावरण की पुनर्रचना करती है। जीवाश्म प्रवालों में द्वि–परपोषीय फेरबदल का पता लगाना में असमर्थता इस पद्धति की कमीयों में से एक है और यह कमी प्रवाल आधारित अतीत जलवायु अनुमानों में पूर्वाग्रह का कारण बन सकती है (जोन्स और मान, 2004)।

6.1.6 हिमतत्व अभिलेख (आइस कोर रिकार्ड)

यह परोक्ष पद्धति स्थानिक रूप से वृक्षकालानुक्रमिकी और प्रबल विवरण द्वारा प्रदान की गई जानकारी का पूरक है। हिम क्रीड, भू–मंडलीय सतह के छोटे से अंश का घेराव करती है। यह पद्धति उत्तरी और दक्षिणी गोलार्ध और अल्पाइन क्षेत्रों से कई सहस्राब्दी में जलवायु परिवर्तन के बारे में जानकारी प्रदान करती है। हिम कोर में बेरिलियम और ऑक्सीजन के समस्थनिक और ज्वालामुखी धूल होती हैं। हिम क्रीड (आइसकोर) गलनशील बर्फ के टुकड़े, अवक्षेपण के संचय, रसायनों की संरचना, अतीत विकिरण और स्थानीय जलवायु परिस्थितियों के लिए जानकारी के स्रोत हैं।

6.1.7 गुहा गौण निक्षेप (स्पैलोथेम)

गुहा गौण निक्षेप एक संरचना है जो पानी से खनिजों के निर्माण द्वारा बनाई जाती है, जैसे पत्थर के अवरोही निक्षेप या निलंबीनिक्षेप, जिसे आमतौर पर गुफा संरचनाओं के रूप में जाना जाता है ये एक गुफा में बने द्वितीयक खनिज निक्षेप हैं। गुहा गौण निक्षेप आमतौर पर चूना पत्थर या डोली अश्म विलयन गुफाओं में बनते हैं। गुहा गौण निक्षेप जलीय चक्र में परिवर्तनों वायुमंडलीय परिसंचरण और अतीत के सांस्कृतिक पहलुओं के बारे में जानकारी प्रदान करते हैं। गुहा गौण निक्षेप उल्का–जल के चक्र और उनकी विकास दर की भिन्नता के परिणामस्वरूप बनते हैं। गुहा गौण निक्षेप में जानकारी प्राप्त करने के लिए विभिन्न मापदंडों जैसे कि विकास दर, समस्थानिकों की संरचना, सूक्ष्मतत्वों, कार्बनिक पदार्थ और परत का अध्ययन किया जाता है। ये चर तापमान, वर्षा और भूजल निवास समय में परिवर्तन से भी प्रभावित होते हैं। गुहा गौण निक्षेप उत्तरी अमेरिका, यूरेशिया, उष्णकटिबंधीय, दक्षिणी अफ्रीका और आस्ट्रेलिया तक सीमित हैं (जोन्स और मान, 2004)।

अपनी प्रगति जांचे

3. गुहा गौण निक्षेप क्या हैं? वे क्या जानकारी प्रदान करते हैं।

....

....

....

....

....

6.1.8 अनुवर्षस्तरीत झील और सागर तलछट प्रमाण

अनुवर्षस्तर एक निक्षेप है जिसका गठन एक हिमनदी के झील या समुद्र में समा जाने से होता है। यह चिकनी मिट्टी की पतली परतों और विषम रंग और बनावट की गाद की एक जोड़ी का निक्षेप है जो एक झील में एक वर्ष (गर्मियों और सर्दियों) के निक्षेप का वर्णन करता है। हिमनद तलछट के कालक्रम को निर्धारित करने के लिए ऐसी

परतों को मापा जा सकता है। वार्षिक अनुवर्षस्तरीत या परतदार झील तलछट जैसे कि हिम क्रीड का गठन अकार्बनिक तलछटों के निक्षेप के कारण होता है और उच्च अक्षांश क्षेत्रों से जलवायु के बारे में जानकारी प्रदान करता है। ये विवरण गर्मियों के तापमान में भिन्नता के बारे में भी बताते हैं। जब तलछट को बोझ निक्षेप प्रक्रिया पर हावी हो जाता है। अनुवर्षस्तरीत तलछट तटीय या मुहाने के वातावरण में भी पाए जा सकते हैं। तलछट में शामिल ऑक्सीजन के समस्थानिक और जीव जंतु समूह का उपयोग कर के समुद्री पर्यावरण की जलवायु संबंधी जानकारी प्राप्त की जा सकती है। विगत शताब्दी की जलवायु की जानकारी विकिरणमापिकी कालनिर्धारण का इस्तेमाल कर के प्राप्त की जाती हैं (जोन्स और मान, 2004)।

6.1.9 बेधन छिद्र(बोर होल्स)

बेधनछिद्र जमीन से छेदा गया एक संकरा रास्ता है जो या तो लंबवत या क्षैतिज रूप से होता है। एक बेधनछिद्र का निर्माण कई अलग–अलग उद्देश्यों के लिए किया जा सकता है। पर्यावरण परामर्शदाता बेघनछिद्र शब्द का प्रयोग सामूहिक रूप से भू–तकनीकी जांच या पर्यावरणीय स्थल मूल्यांकन के लिए छेदे गए विभिन्न प्रकार के सभी छेदों का वर्णन करने के लिए करते हैं। बेधन छिद्र से एकत्र किए गए नमूनों को अकसर उनके भौतिक गुणों की निर्धारित करने के लिए या विभिन्न रासायनिक घटकों या दूषित पदार्थों के स्तर का आकलन करने के लिए एक प्रयोगशाला में परीक्षण किया जाता है।

बेधनछिद्र स्थलीय (उष्णकटिबंधीय, मध्यअक्षांश और उप–ध्रुवीय) और ध्रुवीय बर्फ से ढंके क्षेत्रों से कई दशकों की तापमान विविधताओं के बारे में जानकारी प्रदान करते हैं। जमीन या बर्फ की सतह के तापमान में बदलाव का अनुमान उपसतह बेधन छिद्र तापमान का उपयोग करके लगाया जा सकता है। जमीन की सतह का तापमान मौसमी बर्फ के आवरण, भूमि की सतह के परिवर्तन और मौसम के विशिष्ट कारकों से प्रभावित होता है। सतह वायु तापमान का उपयोग बड़े पैमाने पर जलवायु भिन्नता का वर्णन करने के लिए किया जाता हैं। विसंगतियों को कम किया जाता है, जब स्थानिक नमूना चयन पूर्वाग्रहों को ध्यान में रखा जाता है और स्थानिक प्रतिगमन को सर्वोत्कृष्ट अनुमानों के लिए इस्तेमाल में लाया जाता है। बर्फ बेधन छिद्र आंकड़े घ्रुवीय पर्यावरण के अतीत तापमान परिवर्तनों की जानकारी भी प्रदान करते हैं (जोन्स और मान, 2004)।

6.1.10 हिमानी प्रमाण

इस पद्धति में हिमानी हिमोढ़ का उपयोग अतीत जलवायु परिवर्तनों की व्याख्या करने के प्रमाण के रूप में किया जाता है। हिमोढ़, चट्टानों और तलछट का एक ढेर है जिसे हिमनदी द्वारा ढोकर नीचे निक्षिप्त किया जाता है, आमतौर पर इसके किनारे थिथले और मेड़युक्त होते हैं। हिमानी हिमोढ़ की स्थिति के अध्ययन के साथ हिमनदी की चाल में परिवर्तन, अर्थात अतीत हिमनदों की प्रगति कम होने का अनुमान लगाया जा सकता है यह मानते हुए कि क्षेत्रीय हिमानी द्रव्यमान संतुलन अतीत जलवायु, परिवर्तनों को दर्शाते हैं (जोन्स और मान, 2004)।

6.2 वनस्पति प्रमाण का उपयोग कर जलवायु की पुर्नरचना

पौधे के अवशेषों के संदर्भ में जलवायु पुर्नरचना मुख्य रूप से दो प्रकार के प्रमाणों द्वारा किये जाते हैं : वृहत और सूक्ष्म प्रमाण। वृहत प्रमाण लकड़ी के टुकड़े, बीज, छिलके, फल, डंठल, जड़ें, पत्तियां, कलियाँ और उपत्वचा के रूप में हैं। सूक्ष्म साक्ष्य मुख्य रूप

से पराग, बीजाणु, शैवाल, डायटम, वनस्पति अश्म, कैल्सीटिक क्रिस्टल से प्राप्त होते हैं (दिनाकाउज, 2000 सी; प्राईस, 2007बी)। इन प्रमाणों के अलावा, आणविक पद्धतियों जैसे पौधे अवशेषों के डीएनए विश्लेषण और पुरातात्विक स्थलों पर पाए जाने वाले कार्बनीकृत सामग्री के रासायनिक विश्लेषण का उपयोग जलवायु के पुर्नरचना के लिए भी किया जाता है।

6.2.1 वृहत वनस्पति प्रमाण

इस प्रकार के प्रमाण बिना किसी यंत्र की मदद से स्पष्ट रूप से देखे जा सकते हैं। हिस्टोसोल्स वृहत वनस्पतिक सामग्रियों के सर्वश्रेष्ठ संरक्षक हैं। हिस्टोसोल्स एक मिट्टी है जिसमें मुख्य रूप से पास की जैविक सामग्री होती है; मुख्य रूप से भौगोलिक दृष्टि से उच्च अक्षांश क्षेत्रों या अन्य दलदली आर्द्रभूमि, दलदल, जलमग्न प्रोलाइट्स के रूप में (जीवाश्म मलमूत्र), कार्बोनेट पपड़ी, जंगली चूहों द्वारा निर्मित मलबे के ढेर, खाद्य भंडार और शिल्पकृतियाँ के रूप में पायी जाती हैं ये वृहतपुष्पीय प्रमाणों के स्रोत हैं। वृहत पुष्पीय अवशेष बेहतर संरक्षित होते हैं। जब से कार्बनीकृत, खनिजकृत और अवायवीय स्थितियों में निक्षिप्त होते हैं। ये अवशेष जमे हुए और स्थायी सूखापन की स्थिति में भी रखे जाते हैं ताकि हवा और जीवाणविक उपघटन के अनावृति से रोका जा सके। ये आहार के साथ–साथ जलवायु संबंधी प्रमाणों का भी संरक्षण कर सकते हैं।

कार्बनीकृत सामग्री व्यापक ऊतकों जैसे लकड़ी, बीज, डंठल, कंद, जड़े, कुछ फल, और कदाचित रेशें को संरक्षित करती है। कार्बनीकृत सामग्री के विश्लेषण से समकालीन जलवायु उपयोग की अवधि, स्थलों पर किए गए कार्य, गतिविधियाँ, परित्याग का स्वरूप और समय के बारे में जानकारी प्रकट करता है। स्थल पर वृहत जीवाश्म पौधों के कुछ हिस्सों को संरक्षित करते हैं और स्थानीय पर्यावरण के बारे में जानकारी प्रदान करते हैं। प्राप्त किए गए वृहत पौध अवशेषों की व्याख्या गैर–सांस्कृतिक (प्राकृतिक संदर्भों) और गैर–सांस्कृतिक (पौधों का उपयोग, आकार, विविधता और पर्यावरण की गुणवत्ता) संदर्भों के रूप में की जा सकती है (दिनाकाउज, 2000सी)।

6.2.1.1 वृहत वनस्पतिक अवशेषों की पहचान के लिए उपयोग की जाने वाली पद्धतियाँ

वृहत वनस्पतिक अवशेषों की पहचान क्षेत्र के लिए तैयार की गई वनस्पति कुंजियों और सुखी वनस्पतियों के संग्रहों (हारबेरियम) द्वारा की जाती हैं। जले हुए नमूनों को चिन्हित कर कार्बनीकृत नमूनों के रूप में तैयार किया जाता है और उपयोग किया जाता है। अवलोकन इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी यंत्र का उपयोग करके वृहत जीवाश्मों की पहचान की जाती है। वृहत वनस्पतिक प्रमाण प्रजातियों और पौध अवशेषों के संदर्भ की जानकारी प्रदान करते हैं। जब नमूने को स्थानिक निर्देशांक के साथ सहसंबंद्ध किया जाता है, तो इसकी उत्पत्ति और विक्षेपण पर्यावरण के संदर्भ में व्याख्यायित की जा सकती है।

वृहत जीवाश्मों की व्याख्या आधुनिक वनस्पतियों और पेड़–पौधे की समरूपता और कई स्रोतों से निकाले गए पुरापर्यावरण निष्कर्ष पर निर्भर करती है। संतृप्त पौधे अवशेषों और तालाब के किनारों और दलदल से एकत्र किए गए प्रमाण इन आंकड़ों को पूरा करते हैं। वृहतजीवाश्मों की प्रजातियों के स्तर तक विशेषता बतलाई जा सकती है। बड़े जंगल के नमूने आंकड़ों वन अपघटन, वृक्ष–कालानुक्रमिकी और वृक्ष–जलवायु

विषयक प्रमाणों की व्याख्या में सहायता कर सकता हैं। वृहतजीवाश्म आंकड़े स्थानीय पौधों और अन्य पौधों के साथ संबंध के लिए सही प्रमाण प्रदान करता है लेकिन वे सांख्यिकीय रूप से अपने क्षेत्र के पौधों के प्रतिनिधि शायद नहीं हो सकते हैं (दिनाकाउज, सी)। वृहत वनस्पतिक अवशेष एक पुरातात्विक स्थल में विभिन्न प्रजातियों की उपस्थिति और प्रतिशत के बारे में सूचित करते हैं जो मानव आहार, निवास का काल और स्थल के पर्यावरण की समझने के लिए उपयोगी है (प्राइस 2007 बी)।

6.2.2 सूक्ष्म वनस्पतिक अवशेष

सूक्ष्म वनस्पतिक अवशेष पौधों की प्रजातियाँ, कृषि की उत्पत्ति और जलवायु परिवर्तन की जानकारी में सहायक होते हैं, नमूने स्तरीकृत अनुक्रम से प्राप्त होते हैं। सूक्ष्मवनस्पतिक अवशेषों के अलावा, मकई के आनुवांशिक विश्लेषण ने अनुक्रम स्तर और उनके स्थान परिवर्तन की जानकारी का पता चला है (प्राईस, 2007 बी, दिनाकाउज, 2000सी)। बीजाणु पराग, डायटम, फाइटोलिथ और मांड के दाने सूक्ष्मवनस्पतिक अवशेषों के स्रोत हैं। इसका उपयोग पराग वर्णक्रम के आधार पर किसी के वनस्पति इतिहास के पुर्नरचना के लिए किया जाता है। यूरोप के अभिनव युग के जलवायु परिवर्तन की सूक्ष्मवानस्पतिक विश्लेषण द्वारा पुर्नरचना की गई थी। मध्य पाषाण संस्कृति के पर्यावरणीय कारकों इस पद्धति से जाना गया था।

6.2.2.1 बीजाणु : बीजाणु चपटे, अंडाकार, गोलाकार या त्रिकोणीय आकार के होते हैं। परागकणों की तुलना में बीजाणु आकार में बड़े होते हैं। बीजाणु, काई, फर्न और कवक जैसे पौधों से संबंधित गैर–फूलों वाले पौधों की अलैंगिक प्रजनन कोशिकाएं हैं। उनके पास एक नए पौधे के विकास को प्रेरित करने की क्षमता है। बीजाणुओं पर प्रमाण सिलुरियन अवधि से पाए जाते हैं जबकि शुरुआती क्रेटेशियम अवधि पराग के बारे में जानकारी प्रदान करती है।

6.2.2.2 परागकण : पराग नर युग्मक होते हैं और हवाओं या कीटों द्वारा परागकरण को प्रेरित कर बीज को पैदा करने के लिए मादा जनन कोशिकाओं को निषेचित करते हैं। पौधों के वंश या प्रजातियों की पहचान करने के लिए पराग का उपयोग किया जा सकता हैं। झील और तालाब, तलछट के पास की निक्षेप और मिट्टी संरक्षित अवायवीय, अल्मीय और पूरी तरह से सूखे हालात इसमें मदद करते हैं। पुरातात्विक स्थलों के साथ पराग का संबंध अतीत की वनस्पतियों, जलवायु और पर्यावरण (अवक्षेपण) की दशा की जानकारी प्राप्त करने के लिए उपयोग किया जा सकता है। पराग अभिलेख पौधों की स्थानीय विविधता को प्रस्तुत करने में विफल रहते हैं और अध्ययन क्षेत्र में आकार, दिशा और वनस्पति संगति के तुंगता के पक्षपाती हैं।

6.2.2.3 पादपाश्म (फाइटोलिथ) : फाइटोलिथ सिलिका पिंड हैं जो संवहनी पौधों में पाए जाते हैं। ये विशेष रूप से आवृत्त में जाति स्तर पर नैदानिक हैं। ये ताड (अरेकेसी) के सभी अंगों में पाए जाते हैं। फाइटोलिथ हजारों और लाखों वर्षो से मिट्टी में संरक्षित हैं। ये वर्गीकी के बारे में समय और स्थान के संदर्भ में जानकारी प्रदान करते हैं। ये विभिन्न आकार में पाए जाते हैं जैसे डंबल, काठी, कटोरा, नाव और पिरामिड और कुछ पौधों में (वर्गीकी) की विशेषता पाए जाते हैं। फाइटोलिथ को भारी तरल प्लवनशीलता और अपकेन्द्रीयकरण द्वारा अन्य तलछटी घटकों से अलग किया जाता है। फाइटोलियस का विश्लेषण पौधों के वितरण और उपयोग के साथ–साथ जलवायु प्रकार के बारे में जानकारी प्रदान करता है।

6.2.2.4 डायटम : ये जलीय एककोशिकीय सूक्ष्म शैवाल हैं जो प्रचुर मात्रा में ऑक्सीजन उत्पादित करते हैं। वे समुद्री और ताजे पानी के वातावरण में पाए जाते हैं। सूक्ष्मदर्शी का उपयोग करके उन्हें प्रजातियों के स्तर तक पहचाना जा सकता है। डायटम का विश्लेषण पुरातात्विक अभिलेख के पूरक के लिए जलवायु परिस्थितियों की जानकारी प्रदान करते हैं।

6.2.2.5 मांड (स्टार्च) के दाने : मांड एक जटिल कार्बोहाइडेट है जो बीज, कंद, और पौधों के कंदों में पाया जाता है जैसे आरारोट, कसाबा, जौ, मक्का, बाजरा, जई, आलू, चावल, तेजपत्रा, शकरकंद, कचालू, गेहूं और रतालू। मांड तलछट में बेहतर संरक्षित है और वंश और संभवतः प्रजातियों की पहचान में सहायता कर सकता है। मांड पहचान के लिए माप, आकार, प्रकाशीय और रासायनिक गुणों जैसे चर का विश्लेषण किया जाता है। मांड जीवाश्म के अध्ययन से अतीत मानवों के आहार और पर्यावरण और उनकी संस्कृतियों के बारे में जानकारी का पता चलता है।

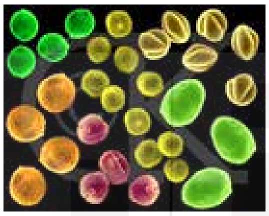
चित्र 3 : पराग

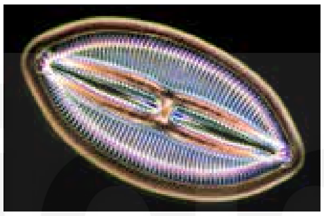
चित्र 4 : डायटम चित्र

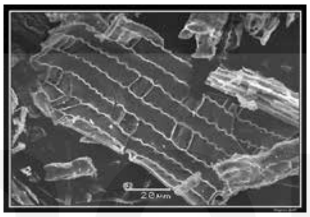
5 : फाइटोलिथ

स्रोतः https://www2.estrellamountain.edu/faculty/farabee/biobk/BioBookflowersII.html

https://sites.google.com/site/botany317/session-2/eukaryotes/session-3/heterokonts/diatoms

https://en.wikipedia.org/wiki/Phytolith

6.3 जीव–जंतु प्रमाणों का उपयोग कर जलवायु की पुर्नरचना

पारिस्थितिक कारक या जैविक कारक एक पुरातात्विक स्थल पर पायी जाने वाली कार्बनिक सामग्री हैं जो पुरातात्विक महत्व की होती हैं। ये जानवरों की हड्डीयों, लकड़ी के कोयले, पौधे और पराग हैं। पुरातात्विक स्थलों पर उपलब्ध पशु पारिस्थितिक कारक हड्डी, दांत, मृग–श्रृंग, हाथी दांत, खाल, बाल, शल्क और खोल हैं। अतीत में मानवों और जानवरों के बीच पारस्परिक क्रिया को बेहतर ढंग से समझने के लिए, पुरातत्वविदों ने सभी जानवरों के अवशेषों का अध्ययन किया। अधिकांश मामलों में पुरातात्विक स्थलों पर केवल हड्डियाँ या हड्डियों का कुछ हिस्सा पाया जाता है। पशु अवशेषों के अध्ययन से मनुष्य और पशु संबंधों के बारे में जानकारी का पता चलता है। पशु जैविक–कारक इस बात की जानकारी प्रदान करते हैं कि जानवरों को कैसे मारा गया, जमावड़े में कितने जानवर मौजूद थे और आहार में माँस का कितना हिस्सा था। ये अवशेष, वयस्क से किशोर और नर–मादा जानवरों के अनुपात, समयानुकूल या चयनात्मक जानवरों का शिकार, जानवरों को मारने के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले उपकरण, जानवरों को पालतू बनाने की प्रक्रिया, आयु और जानवरों के लिंग निर्धारण की जानकारी देते हैं। पशु अतीत पर्यावरण के लिए महत्वपूर्ण साक्ष्य प्रदान करते हैं। उदाहरण के लिए किसी भी निक्षेप में उनावृत गैंडा और महाकुंजर (मैमथ) की उपस्थिति ठंडी जलवायु (हिमानी) को दर्शाती है।

चित्र 6 : रिच नेक स्लेव क्वॉट में पाए गए जीव जन्तु अवशेष
स्रोत : https://www.nps.gov/ethnography/aah/aaheritage/images/bones.jpg

विशेष स्थल से हड्डियों की उत्पत्ति जानने के लिए हड्डियों को गिना जाता है और हड्डियों के प्रकार और आकार का उपयोग करके जानवरों को वर्गीकृत किया जाता है। वर्गीकरण जानवरों की पहचान जैसे स्तनपायी या कृंतक में सहायता कर सकती है। पशु प्रजाति की विशेषता प्रकाशित गाइडों और कुंजियों के साथ पुरातात्विक सामग्री की तुलना कर के बताई जाती है। हड्डियों का उपयोग करके पशु की पहचान वंश या जाति स्तर तक की जा सकती है। किसी दिए गए पुरातात्विक स्थल पर जानवरों के अवशेषों को संरक्षण, खंडीकरण और निक्षेपण की अवस्था के आधार पर पहचाना जा सकता है और इसकी निश्चितता 5 प्रतिशत से 40 प्रतिशत है। यह जानने के लिए कि प्रत्येक प्रजाति के कितने जानवर विशेष स्थल पर मौजूद थे, एनआईएसपी (पहचाने गए नमूनों की संख्या) और एमएनआई (वैयक्तिक की न्यूनतम संख्या) जैसे उपायों का उपयोग किया जाता है। आयु और लिंग निर्धारण प्रमुख प्रजातियों के स्थल की ऋतुनिष्ठता को जानने के लिए किया जाता है। लिंग का निर्धारण आकार के आधार पर किया जाता है, कुछ हड्डियाँ (श्रेणि), मृग–श्रृंग, हाथी दांत, सींग और दांतों का उपयोग करके भी किया जाता है। मृत्यु के समय उम्र का निर्धारण करने के लिए जिन चरों पर ध्यान दिया जाता है, उनमें हड्डियों का आकार, हड्डी के अस्थि–धातुकरण की मात्रा, दांतों की संख्या और अवस्था शामिल हैं। शाकाहारी मामले में दांतों की ऊपरी परत, दांतों की वार्षिक वृद्धिवलय, और *सिमेंटम एनउलि* (दंतमल के आसपास दंतबत्त का वार्षिक जमाव) का उपयोग करके पशु की उम्र की पुष्टि की जाती है। पशु अवशेषों से निवास के काल का निर्धारण, अतीत के लोगों की बस्ती का स्वरूप और निर्वाह के तरीके के बारे में जानकारी प्राप्त हो सकती है।

मृत्यु के बाद जीवों के जैविक, रासायनिक और शारीरिक प्रक्रियाओं का अध्ययन जो जीवों के स्वरूप को बदलते हैं और अंततः उनके संरक्षण में प्रमुख होते हैं, को टैफॉनामी के रूप में जाना जाता है। इस प्रक्रिया के प्रारंभिक चरण में मुर्दाखोर या सूक्ष्मजीवों द्वारा जीव के नरम भागों को अलग करना या क्षय करना होना होता है। टैफोनॉमी परिवर्तनों के विश्लेषण से मरणोत्तर प्रक्रियाओं को फिर से पुनर्निमाण करने में मदद मिल सकती है जो स्थल रचना प्रक्रियाओं और पुरापर्यावरण पर जानकारी प्रदान करते हैं।

हड्डियों का उपयोग मानव द्वारा लंबे समय तक किया गया था। यूरोप की उत्तर पुरापाषाण संस्कृति से हड्डियों का उपयोग कर के विभिन्न उपकरण जैसे सुई, चिक्रका, फलक, कुदाती, हथियार, बर्फ पर फिसलने की पादुका, मृग–श्रृंग बालों की कंधी

बनाने के लिए उपयोग किए गए थे; आभूषण आदि बनाने के लिए हड्डी और हाथीदांत का प्रयोग किया गया था। स्थलीय उदरपाद (गेस्ट्रापोडा) स्थानीय स्तर पर भूमि उपयोग और पौध अनुक्रम पर जानकारी प्रदान करते है। सीप स्थानीय वास स्थान, जलवायु और स्थल पर रहने समय के संकेतक हैं। किसी विशेष स्थल पर सीप का अनुपात, स्थानीय जल स्थितियों के बारे में जानकारी प्रदान करता है और ऑक्सीजन समस्थानिक के अनुपात का अध्ययन समय के साथ पानी के तापमान में हुए परिवर्तनों के बारे में बताता है। कवयधारी (घोंघा) जीव हर साल एक वृद्धि वलय जोड़ते हैं और विकास वलयों का अध्ययन स्थल के मौसम के बारे में बताता है। उपमार्जक केकड़े तापमान और नमी के बेहतर संकेतक हैं। सीपियां पानी की गुणवत्ता और मानव भूमि उपयोग प्रथाओं को जानने में उपयोगी हैं। यृंग समूह (बीटल समूह, जिनमें झींगुर,भौरे इत्यादि कीड़े पाए जाते हैं) अतीत के तापमान की जानकारी प्रदान करते हैं। विशाल पशु अवशेष सकल क्षेत्रीय जलवायु, मध्य–स्तर के आवास अवशेषों का उपयोग मौसम और गडडे–भर के अनावृति काल की व्याख्या के लिए और सीपी विकास वलय निक्षेप के कालनिर्धारण के लिए उपयोग किया जाता है (प्राईस 2007, दिनकाउज, 2000डी)।

वातनिरपेक्ष, शुष्क, क्षारीय या खनिजीय वातावरण पशु अवशेषों को लंबे समय तक संरक्षित करता हैं। शिल्प–तथ्य, कसाई काट, पैरों के निशान, जानवरों के बिल, मांद और घोंसलें सूक्ष्ममात्रिक जीवाश्म के स्रोत हैं। पशु अवशेषों के अभाव में, उपलब्ध अवशेषों का विश्लेषण पुरातात्विक संदर्भो में पशुओं पर जानकारी प्रदान करता है। कार्बन समस्थानिकों के विश्लेषण से पशुओं के आहार घटकों और जलवायु भिन्नता पर हमारी समझ में सुधार करता है। नाइट्रोजन समस्थानिक मांस और शाकाहार के अनुपात पर प्रकाश डालता है, जबकि सूक्ष्ममात्रिक तत्व एकाग्रता निर्धारण आहारीय संयोजन, उर्जा स्तर, पशु श्रेणियाँ और पुराजलवायु के बारे में बताता है। (दिनाकाउज, 2000 डी)

अपनी प्रगति जांचे

4. पशु अवशेषों के प्रमुख स्रोत क्या हैं? वे क्या जानकारी प्रदान करते हैं?

....

....

....

....

6.4 सारांश

जलवायु को दुनिया के एक परिभाषित क्षेत्र में प्रचलित तापमान और वर्षा के माध्य एवं श्रेणी के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। जलवायुवीय परिवर्ती के प्रत्यक्ष परिमाण केवल दो शताब्दियों तक जानकारी प्रदान करते हैं। जलवायु परिवर्तनशीलता के अप्रत्यक्ष या प्रतिनिधित्व परिणामों पर निर्भरता अतीत के जलवायु की आवश्यकता होती है। परोक्षी या अप्रत्यक्ष प्रमाण परिवर्तन के विभिन्न कारणों, अतीत के पर्यावरण और पर्यावरण में हुए परिवर्तनों को इंगित करते हैं।

कालनिर्धारण पद्धतियाँ का उपयोग जीवाश्मों की आयु का अनुमान लगाने के लिए किया जाता है, इन्हें सापेक्ष और निरपेक्ष के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। सापेक्ष पद्धतियों में अश्मस्तरिक (लिथोस्ट्रेटीग्राफी), टेफ्रोस्ट्रेटिग्राफी, जैवस्तरिक और रासायनिक पद्धतियाँ शामिल हैं। निरपेक्ष कालनिर्धारण पद्धतियाँ तिथिपत्र वर्ष के अनुसार वस्तु का काल निर्दिष्ट करती है। इनमें वृक्षकालानुक्रमिकी, रेडियोकार्बन,

रेडियोपोटैशियम, आर्गन/आर्गन, यूरेनियम शृंखला, भूचुम्बकत्व और पुराचुम्बकत्व, तापसंदीप्ति, इलेक्ट्रान चक्रण अनुकम्पन, लावा काँच जलयोजन और विखंडन पथ शामिल हैं।

यंत्र द्वारा आंकड़ों का उपयोग लगभग 1850 वर्षों के जलवायु परिवर्तनों की व्याख्या के लिए किया जा सकता है। ऐतिहासिक अभिलेखों में तुषार तिथियाँ, सूखे, अकाल, जननिकायों का हिमीकरण, बर्फ की अवधि और बर्फ के आवरण पर जानकारी होती है। वृक्षकालानुक्रमिकी पद्धति में अतीत के मौसम, तापमान या सूखे पेड़ों के वक्ष–वलय की चौड़ाई या विलंबित लकड़ी के अधिकतम घनत्वों को मापकर अनुमान लगाया जा सकता है। कई दशकों के प्रवाल आंकड़े और शताब्दी के जीवाश्म आंकड़ों को इकट्ठे करके वर्षों की जलवायु पुर्नरचना की जा सकती है। हिम क्रीड गलनशील बर्फ के टुकड़े, अवक्षेपन के संचय, रसायनों की संरचना, अतीत विकिरण और स्थानीय जलवायु परिस्थितियों के लिए जानकारी के स्रोत हैं। गुहा गौण निक्षेप (स्पेलिओथेम्स) जलीय चक्र, वायुमंडलीय परिसंचरण और अतीत सांस्कृतिक पहलुओं के परिवर्तन के बारे में जानकारी प्रदान करते हैं। वार्षिक अनुवर्षस्तरीत या परतदार झील तलघट उच्च आक्षांश क्षेत्रों से जलवायु और गर्मियों के तापमान में भिन्नता का बोझ निक्षेप प्रक्रिया के बारे में भी जानकारी प्रदान करता हैं। बेधन छिद्र स्थलीय (उष्णकटिबंधीय मध्यअक्षांश, उपघ्रुवीय) और घ्रुवीय बर्फ से ढके क्षेत्रों के कई दर्शकों के तापमान विविधताओं के बारे में जानकारी प्रदान करते हैं। हिमानी प्रमाण पद्धति में, हिमोढ़ (चट्टानों और तलछट का एक बड़ा ढेर जिसे हिमनदी ढ़ोती है) प्रमाण का उपयोग अतीत में हुए जलवायु परिवर्तनों की व्याख्या करने के लिए किया जाता है।

पौधे के अवशेषों के संदर्भ में, अतीत जलवायु की पुर्नरचना मुख्य रूप से दो प्रकार के प्रमाणों द्वारा किये जाते हैं वृहत (लकड़ी के टुकड़े, बीज, छिलके, फल, डंठल, जड़े, पत्तियाँ, कलियाँ और उपत्वचा) और सूक्ष्मकण (पराग, बीजाणु शैवाल, डायटम, वनस्पति अश्म और कैल्सीविक क्रिस्टल)। वृहत वनस्पतिक प्रमाण बिना किसी यंत्र की मदद से स्पष्ट रूप से देखे जा सकते हैं। इन प्रमाणों की पहचान क्षेत्र के लिए तैयार की गई वनस्पति कुंजियों और सुखी वनस्पतियों के संग्रह द्वारा की जाती है। वृहत वनस्पतिक अवशेष एक पुरातात्विक स्थल में विभिन्न प्रजातियों की उपस्थिति और प्रतिशत के बारे में सूचित करते हैं जो मानव आहार, निवास के काल और स्थल के पर्यावरण को समझने के लिए उपयोगी है।

बीजाणु, परागकण, डायटम, फाइटोलिथ और मांड के दाने सूक्ष्म वनस्पतिक अवशेषों के स्रोत हैं। पौधे की प्रजातियों की पहचान करने के लिए बिजाणु और पराग का उपयोग किया जाता है। फाइटोलिथ्स का विश्लेषण पौधों के वितरण और उपयोग के बारे में जानकारी प्रदान करता है। डायटम जलीय एककोशिकीय सूक्ष्म शैवाल हैं जो पुरातात्विक अभिलेख के पूरक के लिए जलवायु परिस्थितियों की जानकारी प्रदान करतें हैं। मांड तलछट में बेहतर संरक्षित होता है। यह वंश और संभवतः प्रजातियों की पहचान में सहायता कर सकता है। मांड(स्टार्च) जीवाश्म के अध्ययन से अतीत की मानव संस्कृतियों के आहार और पर्यावरण के बारे में जानकारी प्राप्त होती है।

पुरातात्विक स्थलों पर पशु पारिस्थितिक कारक जैसे, हड्डी, दांत, मृग–श्रृंग, हाथी दांत, खाल, बाल, और खोल के रूप में उपलब्ध हैं। अतीत में मानवों और पशुओं को बीच पारस्परिक क्रिया को बेहतर ढ़ग से समझने के लिए पुरातात्विविदों ने सभी पशुओं के अवशेषों का अध्ययन किया। हड्डियों का उपयोग करके पशु की पहचान, वंश या जाति

स्तर तक की जा सकती है। आयु और लिंग निर्धारण प्रमुख प्रजातियों और स्थल की ऋतुनिष्ठता को जानने के लिए किया जाता है। पशु अवशेषों का विशेषीकरण टुकड़ों और खंडीकरण के श्रेणीकरण से शुरू होता है। वातनिरपेक्ष, शुष्क, क्षारीय या खनिजीय वातावरण पशु अवशेषों को लंबे समय तक संरक्षित करता है। शिल्प–तथ्य, कसाई काट, पैरों के निशान, जानवरों के बिल, मांड और घोंसले सूक्ष्म मात्रिक जीवाश्मों के स्रोत हैं। कुछ पशु विशिष्ट समय और जलवायु के लिए सूचकांक जीवाश्म के रूप में कार्य करते हैं।

6.5 संदर्भ

दिनाकाउज, डी. एफ. (2002 ए), कलाइमेट रिकंस्ट्रक्शन. *इन इनवाइरनमन्टल आर्कियोलॉजीः प्रिंसीपल्स एंड प्रैक्टिस* (पृ.सं.163–187). कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रैस.

दिनाकाउज, डी. एफ. (2000 बी), कलाइमेटः द ड्राइविंग फोर्सेस : *इन इनवाइरनमेन्टल आर्कियोलॉजी : प्रिंसिपल्स एंड प्रेक्टिस* (पृ.सं. 139–162). कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रैस.

दिनाकाउज, डी. एफ. (2002 सी), फॉनल पेलिओइनवाइरनमेन्टस : कांसेप्ट एंड मेथड. इन *इनवारनमेन्टल आर्कियोलॉजी* : प्रिंसिपल एंड प्रेक्टिस (पृ.सं. 411–443). कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रैस.

दिनाकाउज, डी. एफ. (2002 डी), वेजिटेशन. *इन इनवारमेन्टल आर्कियोलॉजी : प्रिंसिपल एंड प्रेक्टिस* (पृ.सं. 327–328). कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रैस.

जोंस, पी. डी. एंड मान्, एम. ई. (2004), *क्लाइमेट ओवर पास्ट मिलेनिया.* रिव्यूस ऑफ जियोफिजिक्स. 42ः 1–42

वाइस, ए. (2001). माडलिंग क्वाटरनेरी इनवारनमेन्टल. इन ब्रांथविल, डी. आर. एंड पोलार्ड, ए. एम. (संपा), *हेन्डबुक ऑफ आर्किऑलॉजिकल साइंस* (पृ.सं.111–120). जॉन विले एंड संस लिमिटेड.

स्टैनफोर्ड, सी., एलन, जे. एस., एंड एंटन, एस. सी. (2009). बायोलॉजिकल *एंथ्रोपोलॉजी : द नेचुरल हिस्ट्री आफ ह्युमनकाइंड* (द्वितीय संस्करण). न्यू जर्सी, यूएसः पियर्सन प्रेंटिस हॉल.

प्राइस, टी. डी. (2007 ए). डेटिंग. इन *प्रिसिंपल ऑफ आर्कियोलॉजी.* न्यूयॉर्क, इंक,द मैक्ग्रा–हिल कंपनी.

प्राइस, टी. डी. (2007 बी). आर्कियोबॉटनी. इन *प्रिसिंपल ऑफ आर्कियोलॉजी.* न्यूयॉर्क. इंक, द मैक्ग्रा–हिल कंपनी.

प्राइस, टी. डी. (2007 सी). आर्किओजूलोजी. इन *प्रिसिंपल ऑफ आर्कियोलॉजी* न्यूयॉर्क. इंक, द मैक्ग्रा–हिल कंपनी.

6.6 आपकी प्रगति की जांच के लिए उत्तर

1. जलवायु को दुनिया के एक परिभाषित क्षेत्र में प्रचलित तापमान और वर्षा के माध्य और श्रेणी के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। जलवायु पुर्नरचना यह जानने के लिए उपयोगी हैः

   - परिवर्तन के प्रति पृथ्वी की प्रतिक्रिया;

- भविष्य के लिए योजना बनाने के लिए;
- अतीत में बदलाव के प्रति मानव प्रतिक्रिया जानने के लिए जो भविष्य में वैश्विक परिवर्तन के प्रति मानव प्रतिक्रिया की भविष्यवाणी करने में सहायता कर सकता हैं;
- स्थल पर पशुओं के उत्तरजीविता और विलुप्त होने को प्रभावित करने वाले चुनिंदा दबावों को समझना;
- शताब्दी समय–मापक्रम पर जलवायु परिवर्तन के बढ़त के बारे में जानकारी उपलब्ध कराना;
- हालिया ग्लोबल वार्मिंग को प्राकृतिक जलवायु विविधताओं के दायरे में लाना; तथा वैश्विक जलवायु पर ग्रीन हाउस गैसों के मानवजनित उत्सर्जन के प्रभाव का सुझाव देना।

2. जीवाश्मों (कभी जीवित के अवशेष) की आयु का अनुमान लगाने के लिए कालनिर्धारण पद्धति का उपयोग किया जाता है। आयु का अनुमान अतीत के जलवायु, का अप्रत्यक्ष संकेत देता है। कालनिर्धारण पद्धतियों को सापेक्ष या निरपेक्ष के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। सापेक्ष कालनिर्धारण पद्धतियाँ नई और पुरानी सामग्रियों को वर्गीकृत करने के लिए स्तरीकृत संबंधों का उपयोग करती हैं जबकि निरपेक्ष कालनिर्धारण पद्धतियाँ तिथिपत्र वर्ष के अनुसार वस्तु का काल निर्दिष्ट करती हैं। (अधिक जानकारी के लिए कृपया अनुभाग 5.1.1 देखें।)

3. स्पेलियोथेम्स या गुहा रचना द्वितीयक खनिज निक्षेप हैं। उल्का–जल के चक्र और उनको विकास दर की भिन्नता के परिणामस्वरूप गुहा में पत्थर के अवरोही निक्षेप या निलंबी निक्षेप के रूप में गठन होते हैं। ये जलीय चक्र में परिवर्तनों वायुमंडलीय परिसंचरण और अतीत सांस्कृतिक पहलुओं के बारे में जानकारी प्रदान करते हैं।

4. पशु अवशेषों के मुख्य स्रोत हड्डी, दांत, मृग–श्रृंग, हाथी दांत, खाल, बाल, शल्क और खोल हैं। पशु अवशेषों के अध्ययन से इस बात की जानकारी प्राप्त होती है कि पशुओं को कैसे मारा गया, जमावाड़ा में कितने पशु थे और आहार में मांस का कितना हिस्सा था। ये अवशेष व्यस्क से किशोर और नर–मादा पशुओं का अनुपात, समयानुकूल या चयनात्मक पशुओं का शिकार, पशुओं को मारने के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले उपकरण (धारीदार या गँडासा), पशुओं को पालतू बनाने की प्रक्रिया और आयु और पशुओं के लिंग निर्धारण की जानकारी देते हैं। कुछ पशु विशिष्ट समय और जलवायु के लिए सूचकांक जीवाश्म के रूप में कार्य करते हैं।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 7 नूतन जीव महाकल्प चतुर्थ महाकल्प के विशेष संदर्भ में*

इकाई की रूपरेखा

7.0 परिचय

7.1 भूगर्भिक समय पैमाने पर नूतन जीव महाकल्प की स्थिति

7.2 नूतन जीव महाकल्प का कालक्रम

7.3 चतुर्थ महाकल्प और प्रातिनूतन युग हिमायन

7.4 प्रातिनूतन युग हिमायन के प्रमाण

7.5 वृष्टयावर्तन और वृष्टि प्रत्यावर्तन

7.6 प्रातिनूतन हिमायन के कारण

7.7 सारांश

7.8 संदर्भ

7.9 आपकी प्रगति की जांच करने के लिए उत्तर

अधिगम के उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप सक्षम होंगें :

- भूगर्भीय समय पैमाने पर नूतन जीव महाकल्प की स्थिति और कालक्रम जानने में;
- नूतन जीव महाकल्प के विभिन्न कालों को समझने में;
- विभिन्न हिमायनी और अंतर–हिमायनी चरणों के अध्ययन में;
- अत्यंत नूतन काल जलवायु परिवर्तन के कारणों पर चर्चा करने में।

7.0 परिचय

नूतन जीव महाकल्प को सेनोजोइक या कैनोजोइक के रूप में भी जाना जाता है। सेनोजोइक का शाब्दिक अर्थ है 'नया जीवन। यह ग्रीक मूल *काईनोस* का अर्थ 'नया' और *जोइको* का अर्थ 'पशु जीवन' से बना है। इस महाकल्प के दौरान मानव सहित जीवाश्म नर–वानर के विकास और विविधीकरण के कारण मानवविज्ञानियों के लिए नूतन जीव महाकल्प पर्याप्त रूचि का है। नर–वानर के अलावा, स्तनधारियों के विभिन्न समूहों के एक महत्वपूर्ण हिस्से का नूतन जीव महाकल्प के दौरान भी विकास और विकिरण हुआ। यही कारण है कि कभी–कभी नूतन जीव महाकल्प को 'स्तनधारियों का युग' भी कहा जाता है जो नूतन जीव महाकल्प के दौरान पृथ्वी के प्रमुख पशु थे। यह महाकल्प लगभग 6.5 करोड़ वर्ष पूर्व शुरू हुआ था और वर्तमान मे जारी है। महाद्वीपों के मौजूदा स्थानों और वर्तमान वनस्पतियों और जीवों के वितरण ने इस समय अवधि के दौरान अपने वर्तमान विन्यास का अधिग्रहण किया है।

*प्रो. राजन गौर, मानवविज्ञान विभाग, पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़

यह महाकल्प, मध्यजीव महाकल्प के अंतिम चरण (क्रिटेशस) काल के अंत से शुरू हुआ। क्रिटेशस–काल का अंत बड़े पैमाने पर विलुप्तीकरण के कारण उल्लेखनीय है, जब गैर–पक्षीय डायनासोर, कई और जीवों के साथ पूरी तरह से मिटा दिए गए थे। सरीसृप विलोपन द्वारा खाली किए गए कई प्रकार के पारिस्थितिक *निवास स्थल* पर स्तनधारियों द्वारा धीरे–धीरे कब्जा कर लिया गया और इसका दोहन किया, जिससे इनमें वृद्धि और विविधीकरण हुआ और ये पृथ्वी के जीव–जंतु जीवन पर हावी रहे।

नूतन जीव महाकल्प के शुरूआती काल के दौरान पृथ्वी अधिकतर छोटे जीव–जंतुओं द्वारा आबाद थी, जिसमें छोटे स्तनधारी भी शामिल थे। हांलाकि कुछ समय में स्तनधारियों ने डायनासोर, जो मध्यजीव महाकल्प के दौरान पृथ्वी पर हावी हो गए थे, की अनुपस्थिति का लाभ उठाया और चारों और फैल गए। स्तनधारियों ने लगभग सभी पारिस्थितिक पनाह पर कब्जा कर लिया, जो पहले डायनासोर के क्षेत्र थे। समय के साथ, स्तनधारियों में कुछ आकार में बहुत बढ़ गए और आज के सबसे बड़े स्तनधारियों जैसे व्हेल और हाथियों के मुकाबले में भी बड़े हो गए। स्तनधारी वर्ग के सभी बीस क्रमों में, मानवविज्ञानियों के लिए नर–वानर (प्राइमेट) विशेष रूचि के हैं, जिनका नूतनजीव महाकल्प के दौरान अन्य स्तनधारियों के साथ विकास, विविधीकरण और फैलाव हुआ था।

7.1 भूगर्भिक समय पैमाने पर नूतनजीव महाकल्प की स्थिति

नूतनजीव महाकल्प पुरा इतिहास के तीन प्रमुख उपखंडों में से सबसे हाल का है। अन्य दो मध्यजीव महाकल्प और पुराजीवी महाकल्प हैं। इससे पहले कि हम नूतनजीव महाकल्प पर चर्चा करे, पृथ्वी के भूगर्भिक इतिहास के विभिन्न प्रभागों और इसमें नूतनजीव महाकल्प की स्थिति को संक्षेप में समझना उपयोगी होगा। भूवैज्ञानिक समय के उत्तरोत्तर छोटी इकाइयों के रूप में आम तौर पर स्वीकार किए गए विभाजन/ महाकल्प, कल्प, काल, युग और जीवन काल हैं। समय के प्रमुख विभाजन को महाकल्प कहा जाता है। उत्तरोत्तर में ये हैं : *हडियन, आर्कियन, प्रोटेरोजोइक* और *फेनारोजोइक*। इनमें से पहले तीन को सामूहिक रूप से प्राकत्रिखण्ड महाकल्प (प्रीकैंब्रियन सुपर इयान) कहा जा सकता है। महाकल्पों को कल्प में विभाजित किया गया है। कल्प बारी–बारी से काल, युगों और जीवन कालों में विभाजित होते हैं। भूगर्भिक समय के विभिन्न विभाजन को उनके जीवन कालों के साथ, नूतनजीव महाकल्प की स्थिति को तालिका–1 में दर्शाया गया है।

7.2 नूतनजीव महाकल्प का कालक्रम

मानवशास्त्रीय दृष्टिकोण से नूतनजीव महाकल्प बहुत महत्वपूर्ण है, क्योंकि पूरे नर–वानर विकास और बाद में मानव विकास इस कल्प के दौरान हुआ। नरवानर के अलावा, पृथ्वी के इतिहास के इस चरण के दौरान स्तनधारियों, पक्षियों और अधिकांश फूलों के पौधों और घासों का विकास और विस्तार हुआ। नूतनजीव महाकल्प को तीन कालों में विभाजित किया गया है अर्थात् पुराजीन काल, नवजीन काल और चतुर्थ महाकल्प, जिसे और सात युगों, अर्थात् पूर्वनूतन, आदिनूतन, अल्पनूतन, मध्यनूतन, अतिनूतन, प्रातिनूतन और नूतनतम में बांटा गया है। नूतनजीव महाकल्प को कभी–कभी 'स्तनधारियों का काल' कहा जाता है, क्योंकि सबसे बड़े थल जानवर, जो स्तनधारी थे, उस समय के दौरान पृथ्वी पर प्रकट हुए। पुराजीन काल तीन युगों में उपविभाजित किया गया हैः पूर्व नूतन, आदिनूतन और अल्पनूतन। नियोजीन काल को दो युगों में विभाजित किया गया है : मध्य नूतन और अतिनूतन। चतुर्थ महाकल्प दो युगों में विभाजित हैः प्रातिनूतन और नूतनतम।

कल्प	महाकल्प	काल	युग	मुख्य जीव	जीवन (myr)
फैनेरोजोइक	सेनोजोइक	चतुर्थ महाकल्प	होलोसिन	हिमयुग कम होता है, वर्तमान हिमप्रत्यावर्तन शुरू होता है। मानव सभ्यता का उदय; जानवरों का पालतूकरण और कृषि। कांस्य युग(3000) ईसापूर्व, लौह युग (1200) कई पूर्व–ऐतिहासिक संस्कृतियाँ	0.0117
			प्लेस्टोसिन	प्लेइस्टोसिन मेगाफौना पहले फूलता है और फिर विलुप्त हो जाता है। शारीरिक रूप से आधुनिक मानव विकसित होते हैं। मानव पाषाण युगीन संस्कृतियों का उद्भव। हिमनदों और इंटरग्लेशियल चरणों के साथ चतुर्धातुक हिमयुग जारी है।	2.58
		नियोजीन	प्लीयोसीन	स्तनधारियों की मौजूदा उत्पत्ति के कई मौजूद हैं। होमिनिड्स दिखाई देते हैं और विविध होते हैं। ठंडी और शुष्क जलवायु।	5.3
			मायोसिन	घोड़े और मास्टोडन में विविधता है। आधुनिक स्तनधारी और पक्षी परिवार पहचान योग्य हो जाते हैं। पहले वानर प्रकट होते हैं। घास फैल गई।	2.3
		पेलियोजीन	ओलिगोसिन	स्तनधारी और अन्य जीवों का तेजी से विकास और विविधीकरण। फूलों के पौधों का प्रमुख विकास और फैलाव।	34
			इयोसिन	पुरातन स्तनधारी पनपते हैं और विकसित होते रहते हैं, कई आधुनिक स्तनधारी समूह दिखाई देते हैं। पहली घास दिखाई देती है।	56
			पेलियोसिन	स्तनधारी कई आदिम वंशों में विविधता लाते हैं। कई आधुनिक पौधे दिखाई देते हैं। भारतीय प्लेट यूरेशियन प्लेट से टकराती है ् 55 उलत। हिमालय उद्भव हुआ	66
	मजोजोइक		क्रेटासियोस	कई नए प्रकार के भूमि डायनासोर विकसित होते हैं (टायरानोसोरस, बतख–बिल और सींग वाले डायनासोर)। फूलों के पौधों का प्रसार। मोनोट्रेम, मार्सुपियल और प्लेसेंटल स्तनधारी दिखाई देते हैं। आदिम पक्षी चलते हैं।	145
			जुरासिक	कई प्रकार के डायनासोर। पहले पक्षी और छिपकली। छोटे स्तनधारी आम। जिमनोस्पर्म और फर्न सामान्य।	201
			ट्राएसिक	पहले स्तनधारी और मगरमच्छ दिखाई देते हैं। भूमि, समुद्र और हवा पर सरीसृप हावी हैं। आधुनिक कोरल और टेलीस्ट मछली दिखाई देती हैं। कई बड़े जलीय उभयचरय बहुत आम है।	252
	पैलियोजोइक		पेरमियन	सिनैप्सिड सरीसृप बहुतायत से हो जाते हैं, उभयचर आमय शंकु–असर वाले जिमनोस्पर्म पहले के वनस्पतियों की जगह लेते हैं। 251 उलत, प्रमुख जीवन,त्रिलोबाइट्स, ग्रेपॉलिट्स, ब्लास्टॉयड, विलुप्त हैं।	299
			कार्बोनिफेरस	उभयचर पहले सरीसृप और कोयला जंगलों में विविधता लाते हैं। पंखों वाले कीड़े विकिरण करते हैं, पहले भूमि कशेरुक के साथ प्रारंभिक शार्क विविधतापूर्ण हैं, ईचिनोडर्म प्रचुर मात्रा मेंय ट्रिलोबाइट्स और नॉटिलोइड्स में गिरावट आती है	359
			डेवोनिया	पहले क्लबमोस, फर्न, बीज–असर वाले पौधे (प्रोग्नमॉस्पर्म) और पहले कीड़े (पंख रहित) दिखाई देते हैं। त्रिलोबाइट्स और बख्तरबंद जेलीफिश में गिरावट, जबड़े मछलियों और शुरुआती शार्क समुद्रों पर शासन करते हैं। पहले उभयचर अभी भी जलीय।	419
			सिलुरियन	पहले संवहनी पौधे। पहली जबड़े युक्त मछलियाँ और समुद्र में कई बख्तरबंद मछलियाँ। कोरल, ब्राचिओपोड्स, क्रिनोइड्स, सी–बिच्छू, ट्रिलोबाइट्स और प्रचुर मात्रा में विविध मोलस्का	444
			आर्डोविसियन	अकशेरुकी विविधताएँ। प्रारंभिक मूंगा। bivalve, nautiloids, articulatebrachiopods, trilobites, ostracods इचिनोडर्म। पहले हरे पौधे और भूमि पर कवक।	485
			कैंब्रियन	जीवन का प्रमुख विविधीकरण। अधिकांश आधुनिक फाइला दिखाई देते हैं। कठिन भागों वाले पहले जानवर, पहले राग। ट्रिलोबाइट्स, कीड़े, स्पंज, ब्राचिओपोड मौजूद हैं। प्रोकैरियोट्स, कवक, शैवाल पर जाते हैं।	541
प्रीकैम्ब्रियन	**प्रोटोजोइक**			ऊपरी हिस्से में, जटिल बहु कोशिका वाले जीवों का एक जीवाश्म। स्ट्रोमेटोलाइट जीवाश्म आम हैं। पहला बहुकोशिकीय जीव (1200myr).	2500
	आर्कियन			सरल एकल–कोशिका जीवन (बैक्टीरिया और नीले–हरे शैवाल जैसे प्रोकैरियोटिक जीवन) सबसे पुराना संभावित माइक्रोफॉसिल।	4000
	हेडियन			पृथ्वी का गठन। इस कल्प में जीवन के लिए कोई सबूत नहीं हैं।	4600

तालिका 1 : भूगर्भीय समय पैमाने पर नूतनजीव महाकल्प की स्थिति

(ए) पूर्व नूतन युग

पूर्व नूतन युग नूतन जीव महाकल्प का पहला युग है, जो वर्तमान से लगभग 6.6 करोड़ वर्ष पहले शुरू हुआ था। यह क्रिटेशस काल के अंत में शुरू होता है जब जीवन बड़े पैमाने पर विलुप्त होना घटित होता है। भूमि पर डायनासोर, समुद्र में तैरने वाले बड़े सरीसृप, नेकटोनिक *ऐमोनाइट* और सबसे सूक्ष्म प्लवक क्रिटेशस–काल के अंत में नष्ट हो गए और स्तनधारियों के क्रम–विकास और फैलाव के लिए कई पारिस्थितिक स्थानों को वाली छोड़ दिया, जो नूतनजीव महाकल्प से 10 करोड़ से अधिक वर्षों पूर्व से मौजूद थे। पूर्वनूतन युग ने स्तनधारियों को बड़े होते और एक व्यापक विविधता के पारिस्थितिक स्थानों पर कब्जा करते देखा। स्तनधारी छोटे कृंतक मध्यम आकार के स्तनधारी थे। पूर्वनूतन युग से जीवाश्म प्रमाण अपर्याप्त है। इस युग में छोटे प्रारंभिक वानरगण, प्लैसोडैपिडस, मार्सूपीअल (धानीप्राणी) और अण्डजस्तनी स्तनधारी मौजूद थे।

(बी) आदिनूतन युग

आदिनूतन युग लगभग 5.6 करोड़ वर्ष पूर्व शुरू हुआ था और लगभग 3.4 करोड़ वर्ष पूर्व इसका अंत हुआ। यह लगभग 2.2 करोड़ वर्षों तक स्थायी रहा, जो नूतन जीव महाकल्प के सभी युगों में सबसे लंबा था। अधिकांश आदिनूतन युग के लिए वैश्रिव जलवायु, गर्म और बरसाती थी। इस अवधि के दौरान जीवाश्म रिकॉर्ड में पहली बार दिखाई पड़ने वाले स्तनधारी समूहों में पेरिसीडैक्टिल, (दो खुरों वाले) द्विखुरीय गण, प्रीबोसिडोन, कृतकों और कई वानरगण हैं। इस युग के दौरान एडापिड और ओमोमोइड प्रोसिमियन का अनुकूलन कम प्रसारित हुआ। यह माना जाता है कि तीव्र भूमंडलीय उष्मीकरण ने गर्म–अनुकूलित स्तनधारियों को बहुत अधिक अक्षाशों पर भूमि संपर्क के माध्यम से महाद्वीपों के बीच पलायन करना संभव कर दिया। घोड़े के अनुरूप *हायरकोथेरियम* जैसे प्रारंभिक पेरिसोडैक्टिल, आदिनूतन युग के बिल्कुल शुरूआत में दिखाई पड़ते हैं। इस युग के अंत तक यह ग्रह कुछ ठंडा था और वर्षावन जैसे पर्यावास जिस ने ज्यादातर महाद्वीपों को ढक लिया था वह स्थान अब, खुले वनप्रदेश को मिल गया था ।

(सी) अल्पनूतन युग

अल्पनूतन युग(ओलिगोसिन) 3.4 करोड़ वर्ष पूर्व से लेकर लगभग 2.3 करोड़ वर्ष तक फैला हुआ है। अल्पनूतन युग के दौरान शीतलन दौर व्यापक रहा। घोड़े, हिरण, ऊंट, हाथी, बिल्ली, कुत्ते और वानरगण जैसे स्तनधारी महाद्वीपों पर हावी होने लगे, सिवाय ऑस्ट्रेलिया महाद्वीप में। एम्फिसिऐनिड्स, घोड़ों *(मोइओहिप्पस)* केनिड्स, ऊंट, टायसुइटे, प्रोटोकोराटटोप्स और एन्थ्रेकोथैरेस के शुरूआती रूप दिखलाई पड़ने लगे। अल्पनूतन युग के अंत के काल में घास भूमि और घास के बड़े मैदानों का विस्तार हुआ जो चराई पशुओं के प्रसार से जुड़ा हुआ था। शुरूआती नयी दुनिया के वानर, वनमानुष *(पैरापिथिकस, एपिडोयम, ऐजाइप्टपिटहिक्स)*, जिसे काफी हद तक मिस्र से जाना जाता है, प्रकट हुए।

(डी) मध्यनूतन युग

मध्यनूतन युग(मायोसिन) नवजीन (नियोजीन) काल का पहला भूगर्भीय युग है और यह लगभग 2.3 करोड़ वर्ष पीछे से 53 लाख वर्ष पूर्व तक फैला हुआ है। यह पूर्ववर्ती अल्पनूतन युग या बाद के अतिनूतन युग की तुलना में गर्म वैश्विक जलवायु का समय था। घास भूमि का विस्तार जारी रहा और जंगलों में कमी जारी रही। उत्तरकालीन

मध्यनूतन युग के दौरान, स्तनधारी अधिक आधुनिक थे, साथ में आसानी से पहचाने जाने वाले केनिड्स, भालू, प्रोसोओनिड्स, इकिड्स, उदबिलाव, हिरण, ऊंट और व्हेल थे। मध्यनूतन युग के दौरान वानर उत्पन्न हुए और विविध हुए और पुरानी दुनिया में व्यापक हो गए *(जाइगेन्टोपिथिकस, सिवापिथेकस, ड्रायोपिथेकस)*। इस समय के दौरान अफ्रीका, एशिया और यूरोप में बड़ी संख्या में वानर प्रजातियां मौजूद थी। अफ्रीका में पहला मानव–सम होमोनिन मध्यनूतन युग के बहुत अंत में दिखाई दिया, जिसमें *सहेलंथ्रोपस* और *ओरोरिन* शामिल थे।

(ई) अतिनूतन युग

अतिनूतन युग(प्लायोसिन) नवजीन काल का दूसरा युग है, जो लगभग 53 लाख वर्ष पूर्व शुरू हुआ और लगभग 25.8 लाख वर्ष पूर्व तक विस्तारित हुआ। अतिनूतन युग के दौरान, महाद्वीप अपने वर्तमान स्थिति की ओर धीरे–धीरे बढ़ते हुए यूरोप के साथ अफ्रीका की टक्कर ने टेथिस सागर के शेषभाग भाग को विच्छेद कर के भूमध्य सागर का निर्माण किया। यूरेशिया में वानरगण वितरण में गिरावट आई। हाथी, गॉमफीथेरेस और स्टेगोडोनटस एशिया में सफल रहें। घोड़ों की विविधता में गिरावट आई, जबकि मवेशी और मृग सफल रहे। अतिनूतन युग के दौरान, मानव–सम जीवाश्म रिकॉर्ड में अच्छी तरह से प्रलेखित हो गए (जैसे *अर्डीपिथेकस, रेमिडस, ऑस्ट्रेलोपिथेकस एनामेंसिस, ऑस्ट्रेलोपिथेकस एफरेन्सिस, ऑस्ट्रेलोपिथेकस गढ़ी, ऑस्ट्रेलोपिथेकस एफ्रीकैनस, हीमो हैबिलिस*)।

(एफ) प्रातिनूतन युग

यह युग (प्लीस्टोसिन) चतुर्थ महाकल्प का पहला युग है जो 25.8 लाख वर्ष पूर्व शुरू हुआ था और वर्तमान से 11700 वर्ष तक रहा था। प्रातिनूतन युग(प्लीस्टोसिन) भूगर्भिक समय का एक अपेक्षाकृत कम अवधि का काल था, जो कि अत्यधिक वैश्विक शीतलन का समय था, जिसे आमतौर पर ''हिम–युग'' के रूप में जाना जाता था। इस युग के दौरान, उत्तरी और दक्षिणी ध्रुवों और सभी उच्च स्थलों पर विशाल ग्लेशियर और बर्फ की चादरें बिछी हुई थीं। ठंड की अवधि या हिमावर्तन काल के बीच–बीच में गर्म चरणों या हिम प्रत्यावर्तन काल हुए थे। शारीरिक रूप से आधुनिक मानव (*होमो सेपियन्स*) का विकास प्रातिनूतन युग के दौरान हुआ, जो कि तब से पृथ्वी के विभिन्न भागों में फैल गए। इस अवधि के दौरान विशालकाय मैमथ के अलावा, लम्बे घुमावदार दांतेदार बिल्लियाँ (*स्मिलोडन*), विशालकाय जमीनी स्लौथ (*मेगथेरियम*) और मास्टोडन जैसे स्तनधारी पृथ्वी पर घूमते थे। इस युग के अंत तक, विशाल स्तनधारियों (विशालकाय, मास्टोडन, लम्बे घुमावदार दांतेदार बिल्लियाँ, जमीनी स्लौथ, गुफा भालू आदि) का एक प्रमुख विलुप्त होने की घटना हुई (शायद मानवों द्वारा अधिक शिकार करने और जलवायु परिवर्तन के कारण) और यह नूतनतम युग में जारी रही।

(जी) नूतनतम युग

नूतनतम युग (होलोसिन) चतुर्थ महाकल्प के युगों में से दूसरा है जो लगभग 11700 वर्ष पूर्व शुरू हुआ था और अभी जारी है। यह ऊष्मीकरण की अवधि है जिसमें वैश्विक जलवायु गर्म हो गई। इस अवधि के दौरान कई बहुत बड़े स्तनधारी, जैसे कि उनावृत (महाकुंजर) और उनावृत गैंडे (वुली गैंडा), विलुप्त हो गए। मानवों ने कृषि और पशुओं को पालतु बनाने की क्रिया को विकसित किया, जिसके बाद कांस्य और लौहे युग, सभ्यताओं का विकास, शहरी केंद्र सरकारें, तेजी से जनसंख्या वृद्धि और 19वीं सदी में औद्योगिक क्रांति का विकास हुआ।

अपनी प्रगति जांचे

1. नूतनजीव महाकल्प को कितने कालों और युगों में विभाजित किया जा सकता है?

....

....

....

....

....

....

7.3 चतुर्थ महाकल्प और प्रातिनूतन युग हिमायन

नूतनजीव महाकल्प का चतुर्थ महाकल्प पृथ्वी के भूवैज्ञानिक इतिहास का सबसे नवीनतम काल है। इसे अत्यंत नूतन हिमायन काल भी कहा जाता है। इसमें दो युग शामिल हैः प्रातिनूतन और नूतनतम (प्लीइस्टोसिन और होलोसिन)। प्रातिनूतन युग पृथ्वी के इतिहास में अपूर्व है क्योंकि इसने बहुत ठंड की स्थिति देखी है जिसे हिमायन या हिम युगों के रूप में भी जाना जाता है। प्रातिनूतन युग की असाधारण विशेषताओं में से एक पृथ्वी के तापमान का धीमी गति से कम होना था जिसका समापन हिम युग के रूप में जाना जाता है। वास्तव में यह एक निरंतर हिमयुग नहीं था, बल्कि बहुत ठंडे समय की एक श्रृंखला थी जिसमें बीच–बीच में गर्म अवस्था होती थी। ठंड की अवस्था को आमतौर पर हिमानी अवस्था कहा जाता है, जबकि गर्म अवस्था को हिमप्रत्यावर्तन अवस्था कहा जाता है। प्रातिनूतन युग के दौरान, अंटार्कटिका और ग्रीनलैंड और पहाड़ों की उच्च ऊंचाई पर हिमचाादर फैली हुई थी। सबसे ठंडे चरण के दौरान दक्षिण में 39^0 डिग्री अक्षांश उत्तर तक हिमानी परिस्थिति थी। जिन देशों में अब शीतोष्ण जलवायु है, वे ध्रुवीय क्षेत्र के आर्कटिक ठंड का अनुभव करते थे और हिमचादरों से ढके होते थे।

कई वर्षों के कार्य के बाद, वैज्ञानिक यह दिखाने में सक्षम हुए कि प्रातिनूतन युग के दौरान कम से कम चार प्रमुख हिमायन और कई हिमप्रत्यावर्तन चरण हुए हैं। हिमायन के अवधि के भीतर कुछ गर्म काल थे, जिसे इंटरस्टेडियल्स कहा जाता था, जब बर्फ कम हो गई थी। अपनी चरम सीमा पर, उत्तरी यूरोप और अधिकांश ब्रिटिश द्वीपों को ढकने वाली विशाल हिमचादरें लगभग दो मील मोटी थी। यह पूरे स्कैंडिनोविया, बाल्टिक सागर और रूस और जर्मनी में दूर तक विस्तारित थी। कम व्यापक ग्लेशियरों ने आल्पस, हिमालय, पाइरेनीज और अन्य उच्च पर्वतीय क्षेत्रों को ढक लिया था। उच्च हिमानी स्थिति के दौरान समुद्र का स्तर 500 फीट तक गिर गया क्योंकि अधिक मात्रा में पानी बर्फ के रूप में अवरोधित हो गया। एक हिमानी चरण को, एक ठंड काल जब वर्धित वर्षण के परिणामस्वरूप उच्च ऊंचाई पर बर्फ के गठन और ध्रुवों पर इसके संचय और बर्फ में जमने और समय के साथ ग्लेशियरों में गठित हो जाने के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।

पेनक और ब्रुकनर ने आल्प्स में अपने कार्य के आधार पर चार हिमायन और तीन हिमप्रत्यवर्तनों की पहचान की है। हिमायन चरणों का नाम उनके द्वारा चार छोटी नदियों के नाम पर रखा गया था जो आल्प्स की तरफ से डेन्यूल घाटी में बहती थीं। आल्प्स हिमायन और उनकी अनुमानित आयु तालिका–2 में दी गई है। एक पूर्व गनज

हिमानी चरण, जिसे डोनाउ कहा जाता है, को कई उप–ध्रुवीय क्षेत्रों में भी पहचाना गया है, जो प्रातिनूतन के विलाफ्रेंचियन काल के दौरान हुआ। (भट्टाचार्य, 1990)

हिमवर्तनों के क्रमिक संख्या	हिमावर्तन / हिमप्रत्यावर्तन चरण	अनुमानित आयु (वर्तमान से पूर्व वर्णों या बी पी)
	उत्तर–हिमनद चरण (पोस्ट ग्लेसियल)	10,000 बीपी
चौथा हिमाच्छादन (हिमायन)		10,0000 बीपी
	रिस–वुर्म अंतरहिमानी	
तीसरा हिमाच्छादन (हिमायन)	रिस हिमप्रत्यावर्तन	200,000 बीपी
	मिंडल–रिस अंतरहिमानी	
दूसरा हिमाच्छादन (हिमायन)	मिंडल हिमप्रत्यावर्तन	400,000 बीपी
	गुंज–मिंडल अंतरहिमानी	
प्रथम हिमाच्छादन (हिमायन)	गुंज हिमप्रत्यावर्तन	600,000 बीपी

तालिका–2 : आल्प्स के चार हिमावर्तन चरण

7.4 प्रातिनूतन हिमायन के प्रमाण

एक हिमनदी बर्फ का एक स्थायी (अपेक्षाकृत रूप से) पिण्ड है, जिसमें व्यापक रूप से पुनर्गठित बर्फ होती है, जो गुरूत्वाकर्षण के खिंचाव के कारण बहाव या बहिर्गामी गति का प्रमाण जाहिर करती हैं। हिमायन के घटित होने के मुख्य प्रमाण इस प्रकार हैं :

1. **हिमोढ** : हिमोढ एक ग्लेशियर की क्षरणात्मक गतिविधि द्वारा उत्पन्न मलबा है। यह गैर छांटे गए विभिन्न आकार के अनियमित कोणीय शिला के टुकड़ों का मिश्रण होता है जो एक महीन दानेदार रेत से लेकर मिट्टी के आकार के टुकड़ों के आव्यूह में होता है, जो ग्लेशियर के भीतर घर्षण द्वारा निर्मित होते हैं और आधारभूत तलशिला से भिन्न रूप में होते है। हिमनदी के संबंध में उनकी स्थिति के आधार पर, हिमोढ़ भूमि हिमोढ़, मध्यवर्ती हिमोढ़, पार्श्व–हिमोढ़ और अंत्य हिमोढ़ हो सकते हैं। हिमोढ़ हिमनदी और हिमाच्छांदित स्थितियों की मौजूदगी के निश्चित प्रमाण हैं। हिमनदी के अन्य प्रमाण यू–आकार की घाटियाँ, लटकती घाटियाँ, (अनियमित) इरैटिक घाटियां आदि है।

2. **समुद्री स्तर में उतार–चढ़ाव** : हिमानी अवधि के दौरान हिमनंदों में बहुत अधिक समुद्र का पानी बंधा होता था इसलिए समुद्र का स्तर कम था। हिमप्रत्यावर्तन अवधि के दौरान, बर्फ के पिघलने से पानी छोड़ने के कारण समुद्र का स्तर अधिक था।

   i) **निम्नतर समुद्र स्तर के प्रमाण** : निम्नतर समुद्र स्तर या हिमानी चरणों के दौरान, समुद्र का स्तर वर्तमान स्तर से बहुत कम था

ए) भूमि पौधों और पशुओं के जलमग्न जैविक अवशेष

बी) जलमग्न नदी मुख भूमि (डेल्टा)

सी) अनियमित जीवजंतु वितरण

II) **अधिक समुद्र स्तर के प्रमाण** : हिमप्रत्यावर्तन चरणों के दौरान, बर्फ की चादरें पिघल गई और समुद्र का स्तर वर्तमान समुद्र स्तर से अधिक हो गया।

ए) जीवाश्म धारक समुद्री तलछट

बी) समुद्र की लहरों से बनी खड़ी चट्टानें

3. **लोयस** : यह एक हवा द्वारा निक्षेपण है जो कि हिमावर्तन के सीमा–पार क्षेत्र में पाया जाता है। यह निक्षेप मिट्टी की तुलना में खुरदरा लेकिन रेत की तुलना मे महीन सामग्री का होता है। यह पास में मौजूद हिमनदी के कारण होता है। डेन्यूब नदी घाटी और कश्मीर घाटी में लोयस निक्षेप इसके उदाहरण हैं। परवर्ती को स्थानीय रूप से केरवास के रूप में जाना जाता है।

4. **नदी–सोपान** : नदी सोपान पहले के बाढ़कृत मैदान का बचा हुआ भाग है, या तो एक धारा या नदी अधिक ऊंचाई पर बह रही थी इससे पहले कि उसी धारा नीचे की ओर कट के कम ऊंचाई पर एक नया बाढ़कृत मैदान निर्मित करता है। नदी–सोपान एक बेंच या सोपान है जो एक घाटी के किनारे के साथ–साथ फैली होती है और घाटी तल के पूर्व स्तर को दर्शाती हैं। किसी भी जलीय या जलवायु परिवर्तन से एक सोपान का निर्माण होता है जो नए सिरे से नीचे की ओर कटाव करता है। जब जलवायु में परिवर्तन के कारण नदीय प्रवाह की मात्रा घट जाती है तब भी पीछे एक सोपान छोड़ा जा सकता हैं। जब अधिक पानी होता है तो नदी का आयतन बढ़ जाता है और इसकी क्षरण गतिविधि बढ़ जाती है। यह अपने तल को गहरा करता है जिससे एक सोपान बन जाता है। यह समझा जाता है कि सोपान भी हिमावर्तन और हिमप्रत्यावर्तन कालों के अप्रत्यक्ष प्रमाण हैं। हिमावर्तन कालों को अधिवृद्धि और हिमप्रत्यावर्तन कालों को उत्कीर्णन से संबंधित बताया गया है (डी टेरा और पैटरसन, 1939)।

अपनी प्रगति जांचें

2. हिमोढ का मतलब क्या हैं? ये किस के बने होते हैं?

....
....
....
....

7.5 वृष्टयावर्तन और वृष्टि प्रत्यावर्तन (प्लूविअल व इंटरप्लूविअल)

जब आर्कटिक शीतोष्ण और उप–शीतोष्ण क्षेत्र हिमावर्तन और हिमप्रत्यावर्तन चरणों का अनुभव कर रहे थे, तब उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्र वृष्टयावर्तन या नमी और वृष्टि प्रत्यावर्तन या शुष्क अवधियों से गुजर रहे थे। ये नदी सोपानों और झील निक्षेपों के रूप में अपने प्रमाण छोड़ गए हैं।

1. **नदी सोपान** : एक नदी सोपान वृष्टयावर्तन चरण के बाद वृष्टिप्रत्यावर्तन चरण के प्रमाण भी प्रदान करता है। यह भी उसी सिद्धांत से बनता है जैसे

ऊपर बताया गया है। बजरी और गाद के प्रर्यायक्रमिक निक्षेपण द्वारा यह निक्षेप चिन्हित हैं। अधिक मात्रा में वर्षा की मात्रा के साथ नदी में पानी का वेग बढ़ जाता है। नदी अपनी बहाव के साथ चट्टानें और अन्य सामग्री ले जाती है जो बजरी में बदल जाती है। शुष्क स्थिति की शुरूआत के साथ, वर्षा की कम मात्रा के कारण नदी भार ढाने की अपनी क्षमता खो देती है और बजरी की बजाय गाद जमा हो जाता है। भारत के पूर्व पश्चिम, मध्य और दक्षिणी भाग से क्रमशः सुवर्णरेखा, लूनी, नर्मदा और कोर्तलियार नदी सोपानों के उदाहरण दिए जा सकते हैं।

2. **झील निक्षेपण** : विभिन्न महाद्वीपों के आंतरिक भाग में कई झीलें हैं जो वृष्टयावर्तन और वृष्टि प्रत्यावर्तन अवधियों का प्रमाण प्रदान करती हैं। वृष्टयावर्तन चरण (नमी काल) के दौरान इन झीलों का विस्तार हो रहा था और वृष्टि प्रत्यावर्तन (शुष्क काल) के दौरान ये झीलें सिकुड़ गई थीं। इन झीलों का विस्तार और सिकुड़ना इस प्रकार हो रहा है की आसपास के क्षेत्रों और जीवन रूपों को जलमग्न और अनावृत कर रहा है। अफ्रीका की झीलें तीन वृष्टयावर्तन विस्तार के विस्तृत प्रमाण प्रदान करती हैं जब केन्या में नाकुरू, एलिमेंटैटा और नाइवाशा झीलों का विस्तार वृष्टयावर्तन चरण में एकल झील बनाती है।

7.6 प्रातिनूतन हिमायन के कारण

प्रातिनूतन हिमायन का ठोस कारण इंगित करना मुश्किल है। हालांकि उनके घटित होने के कारणों की व्याख्या करने के लिए अतीत में कई स्पष्टीकरण दिए गए हैं। इन्हें दो प्रकार के मतों में बांटा जा सकता है : खगोलीय और भौगोलिक (सतह विवर्तनिकी)।

ए. खगोलीय मत

प्रातिनूतन हिमायनों के कारण के लिए कई खगोलीय मत उपलब्ध हैं :

1. *पृथ्वी की कक्षा की समकेंद्रियता में वृद्धि* : इस सिद्धांत का आधार इस सिद्धांत में है जिसे क्रोल की परिकल्पना के रूप में जाना जाता है। 19वीं शताब्दी में, जेम्स क्रोल ने ''पृथ्वी की कक्षा की समकेंद्रियता और हिमायनों से इसके भौतिक संबंध'' नामक एक लेख प्रकाशित किया जिसमें गणना दिखायी की कैसे सूर्य, चंद्रमा और ग्रहों के गुरुत्वीय आकर्षण पृथ्वी की गति और अभिविन्यास को प्रभावित करता है। यह सिद्धांत दो परिघटनाओं पर निर्भर करता है :

   क. पृथ्वी की कक्षा की समकेंद्रियता

   ख. विषुवों का अयन (पूर्वता)

   पृथ्वी की कक्षा में परिवर्तन जो अब लगभग गोलाकार है, अधिक अण्डाकार से कम अण्डाकार तक आवधिक रहा है। इसलिए जब कक्षा अधिक अण्डाकार होती है, तो पृथ्वी पर बहुत लंबी और तीव्र सर्दियां हो सकती है और संक्षिप्त परन्तु बहुत ही गर्म ग्रीष्मकाल, जिसके संचयी प्रभाव के परिणामस्वरूप एक निर्धारित समय के लिए हिमानदियों और हिमावर्तन चरण का विकास होता है। इसका विपरीत तब होगा जब कक्षा कम अण्डाकार या वृत्ताकार होगी। क्रोल के सिद्धांत को बाद में मिल्टिन मिनानकोविच द्वारा विकसित किया गया था, जो एक सर्बियाई भू–भौतिकीविद् थे, जिन्होंने पृथ्वी की कक्षा में

इन अनियमितताओं की गणना करते हुए कहा कि यह मिनानकोविच चक्रों के रूप में ज्ञात जलवायु चक्रों के रूप में सामने आएगा। ऐसा माना गया है कि 92,000 वर्ष की आवधिकता के साथ पृथ्वी की कक्षा की समकेंद्रियता का उतार–चढ़ाव होता है और अयन काल (पृथ्वी के अपनी धुरी पर घूमने के तरीके में परिवर्तन) हर 21,000 वर्षों में बदल जाती है।

2. *पृथ्वी की धूरी और कक्षा की सतह के बीच के कोण में भिन्नता* : प्रातिनूतन हिमायन की व्याख्या करने के लिए जो एक और स्पष्टीकरण दिया गया है वह है पृथ्वी की धुरी और उसकी कक्षा के समतल के बीच कोण में भिन्नता। इस गति की अवधि 40,000 वर्ष मानी जाती है। वर्तमान में कोण 23^0, 27^0 है, और यह विदित है कि यह 21^0, 39^0 और 24^0, 36^0 के बीच परिवर्तित होता है। इस कोण के तिरछेपन में वृद्धि उतरी गोलार्ध को सूरज से दूर ले जाने के कारण मौसमी अंतर को बढ़ाती है, जिसके परिणामस्वरूप स्थिति शीतक हो जाती है। यह अनुमान लगाया गया है कि पृथ्वी की कक्षा के समतल में 1^0 के परिवर्तन से 5^0 डिग्री सेल्सियस का परिवर्तन हो सकता है, जो हिमानी चरण लाने के लिए पर्याप्त हो सकता है।

3. *सौर विकिरण की तीव्रता में बदलाव* : यह सुझाव दिया गया है कि सूर्य से पृथ्वी को प्राप्त होने वाली सौर ऊष्मा स्थिर नहीं होती है और हो सकता है कि हिमानी चरणों के दौरान कम हो गई हो। हटिंगटन द्वारा यह अभिधारणा प्रदान की गई थी कि सौर कंलक चक्रों की आवधिक पुनरावृत्ति होती है जो हिमावर्तन और हिमप्रत्यावर्तन हो सकती है। इसे हटिंगटन की परिकल्पना के रूप में भी जाना जाता है।

अपनी प्रगति जांचें

3. हटिंगटन की परिकल्पना क्या है?

....

....

....

....

बी. भौगोलिक कारण

1. *पृथ्वी के वायुमंडल में परिवर्तन* : वायुमंडलीय कारक–पृथ्वी के वायुमंडल की सरंचना का अध्ययन ध्रुवीय बर्फ की चादर में फंसे हवाई बुलबुलों से किया जा सकता है। यह छेदन अंतभाग (ड्रिल कोर सैंपल) के द्वारा किया जा सकता है। इन बर्फ अंतभाग नमूनों के अध्ययन से पता चला है कि:

i) पिछले हिमायनों के दौरान, दोनों ग्रीन हाउस गैसें कार्बन डाइऑक्साइड और मीथेन, की मात्रा जो भूमंडलीय उष्मीकरण का कारण बनती हैं, हिमप्रत्यावर्तन अवधियों के दौरान कम थी।

ii) अतीत हिमायनों के दौरान, वातावरण में धूल की मात्रा हिमप्रत्यवर्तन अवधि की तुलना में अधिक थी, इस प्रकार से पृथ्वी की वायुमंडल से अंतरिक्ष में प्रतिबिंबित अधिक गर्मी की संभावना थी।

2. *महासागरीय चक्रिकरण में परिवर्तन* : समुद्र के चक्रकरण में छोटे परिवर्तन खगोलीय कारकों द्वारा उत्पादित तापमान भिन्नता में छोटे बदलाव को बढ़ा सकता है।

3. *विवर्तनिक कारणः* बाद के अतिनूतन काल या आरम्भिक प्रातिनूतन काल में महाद्वीपीय उठान, जिससे आल्पस, रॉकी और हिमालय जैसी पर्वत श्रृंखलाओं का उठान होता है, से महाद्वीपों की औसत ऊंचाई में वृद्धि हुई। यह सतह के तापमान, विशेष रूप से अधिक ऊंचाई और अक्षांशों पर कम कर सकता था, इस प्रकार से ठंडी या हिमानी स्थिति को प्रेरित कर सकता था।

अपनी प्रगति जांचे

4. महाद्वीपीय उठान ने हिमायन को कैसे प्रभावित किया?

....

....

....

....

इस प्रकार हम देखते है कि प्रातिनूतन काल के दौरान हिमानी चरणों के घाटित होने के कई नियम हैं। हालांकि कोई भी नियम या कारण अपने आप ही इसे स्पष्ट नहीं कर सकता है। यह संभव है कि कारकों के संयोजन ने प्रातिनूतन हिमायनों को जन्म दिया हो।

7.7 सारांश

पृथ्वी का इतिहास भूवैज्ञानिकों द्वारा कई चरणों में विभाजित किया गया है। नूतनजीव महाकल्प पशु इतिहास के तीन प्रमुख उपखंडों में से सबसे हाल का है। नूतनजीव महाकल्प को तीन कालों में विभाजित किया जाता, अर्थात् पुराजीन काल, नवजीन काल और चतुर्थ महाकल्प. नूतन जीव महाकल्प को कभी–कभी स्तनधारियों का काल कहा जाता है, क्योंकि सबसे बड़े थल जानवर, जो स्तनधारी थे, उस समय के दौरान पृथ्वी पर प्रकट हुए। पुराजीन काल को तीन युगों में विभाजित किया गया है : पूर्व नूतन, आदिनूतन और अल्पनूतन। चतुर्थ महाकल्प दो युगों में विभाजित हैः प्रातिनूतन और नूतनतम। प्रातिनूतन चतुर्थ महाकल्प का पहला युग है जो 25.8 लाख वर्ष पूर्व शुरू हुआ था और वर्तमान से 11700 वर्ष पूर्व तक रहा था। नूतनतम युग चतुर्थ महाकल्प के युगों में से दूसरा है जो लगभग 11700 वर्ष पूर्व शुरू हुआ था और अभी जारी है। यह ऊष्मीकरण की अवधि है जिसमें वैश्विक जलवायु गर्म हो गई। प्रातिनूतन काल जलवायु के उतार–चढ़ाव का काल है। उच्च अक्षांश और उंचाई पर हिम–रेखा के परिवर्तन के कारण जलवायु बारी–बारी से ठंडा और गर्म रहता था। इन चरणों को क्रमशः हिमावर्तन और हिमप्रत्यावर्तन के रूप में जाना जाता है। उष्णकटिबंधीय और भूमध्यरेखीय क्षेत्रों में जलवायु और औसत वार्षिक वर्षा के बीच अंतर के कारण नम और शुष्क स्थिति के बीच बदलती रहती थी। इन्हें क्रमशः वृष्टयावर्तन और वृष्टि प्रत्यावर्तन के रूप में जाना जाता है। हिमावर्तन चरणों के प्रमाण हिमोढ़ के निक्षेप लोयस, समुद्री स्तर में परिवर्तन और नदी–सोपानों में पाए जाते हैं। एकांतर रूप से शुष्क और नम स्थितियों के प्रमाण भी नदी–सोपान, बजरी और गाद के एकांतर निक्षेप और झील के जल स्तर में परिवर्तन में मिलते हैं। जलवायु के उतार–चढ़ाव के कारणों की विभिन्न सिद्धांतों, अर्थात् खगोलिय और भौगोलिक द्वारा व्याख्या की गई है। चतुर्थ महाकल्प पुरातात्विक मानव विज्ञान के लिए सबसे महत्वपूर्ण है। इस दौरान मानव का जैव–सांस्कृतिक विकास हुआ था। यह पर्यावरण और समय आयाम, जो मानव और उसकी संस्कृति में परिवर्तन के कारण बने की जानकारी देता है।

7.8 संदर्भ

डी टेरा, एच., एंड पैटरसन, टी. टी. (1939). *स्टड़िइस आन द आइस एज इन इंडिया एंड असोशिएटेड हयूमॅन कॅल्चरस* (वाल्यूम. 493). वाशिंगटन (डी सी): कार्नेगो इनस्टिटयूशॅन ऑफ वाशिंगटन.

एहलर्स, जे., एंड गिबार्ड, पी. एल. (2004). *क्वटर्नरी ग्लैसिएशॅन इक्सटेन्ट एंड क्रोनोलाजी : पार्ट 1 : यूरोप* (वाल्यूम 2). एलसेवीर.

एहलर्स, जे., एहलर्स, जे., गिबार्ड, पी. एल, एंड हयूजेस, पी. डी. (संपा). (2011). *क्वटर्नरी ग्लैसिएशॅन इक्सटेन्ट एंड क्रोनोलाजी : ए क्लोजर लुक* (वाल्यूम 15). एलसेवीर.

फ्लिंट, आर. एफ. (1947). *ग्लेशियल जिआलॅाजी एंड द प्लेइस्टोसिन ईपोच* (वाल्यूम 6). न्यूयॉर्क : विली.

लोव, जे. जे. एंड वाकर, एम. जे. (1998). *रीकन्स्ट्रक्टिंग क्वटर्नरी एन्वाइरन्मेन्ट्स,* हार्लो : लॉन्गमैन.

सांकलिया, एच. डी. (1962) *प्रिहिस्ट्री एंड प्रोहिस्ट्री इन इंडिया एंड पाकिस्तान,* यूनिवर्सिटी ऑफ बॉम्बे, बॉम्बे.

7.9 अपनी प्रगति की जांच करने के लिए उत्तर

1. नूतन जीव महाकल्प को तीन कालों में विभाजित किया गया है अर्थात् पुराजीन काल, नवजीन काल और चतुर्थ महाकल्प और सात युग अर्थात् पूर्व नूतन, आदिनूतन, अल्पनूतन, प्रातिनूतन और नूतनतम।

2. हिमोढ़ एक ग्लेशियर की क्षरणात्मक गतिविधि द्वारा उत्पन्न मलबा है। यह गैर छांटे गए अनियमित विभिन्न आकार के कोणीय शिला के टुकड़ों का मिश्रण होता है जो एक महीन दानेदार रेत से लेकर मिट्टी के आकार के टुकड़ों के आव्यूह में होता है, जो ग्लेशियर के भीतर घर्षण द्वारा निर्मित होते हैं और आधारभूत तलशिला से भिन्न रूप में होते हैं।

3. हटिंग्टन परिकल्पना' के अनुसार सूर्य से पृथ्वी को प्राप्त होने वाली सौर उष्मा स्थिर नहीं होती है और हो सकता है कि हिमानी चरणों के दौरान कम हो गई है। हटिंग्टन की यह अभिधारणा थी कि सौर कंलक चक्रों की आवधिक पुनरावृति होती है जो हिमवर्तन और हिमप्रत्यावर्तन हो सकती है। इसे 'हटिंग्टन की परिकल्पना' के रूप में भी जाना जाता है।

4. बाद के अतिनूतन काल या आरम्भिक प्रातिनूतन काल में महाद्वीपीय उठान, जिससे आल्पस, रॉकी और हिमालय जैसे पर्वत श्रृंखलाओं का उठान होता है, से महाद्वीपों की औसत ऊंचाई में वृद्धि हुई। यह सतह के तापमान विशेष रूप से अधिक उंचाई और अक्षांशों पर, कम कर सकता था, इस प्रकार से ठंडी या हिमानी स्थिति को प्रेरित कर सकता था।